कई बार जाकर भी हड़बड़ी में मुझे देख न सके। बस, पिता माता दोनों शोक में पागल हो कर का-हुआँ का हुआँ कह कर रो उठे। रोने की आवाज सुन कर सभी अड़ोसी-पड़ोसी भी का-हुआँ का-हुआँ करते वहाँ दौड़ पड़े। इस रोने-चीखने से अजीब कोलाहल हुआ। मरी नींद टूट गई। दौड़ता हुआ वहाँ जा पहुँचा। मुझे पाकर मेरी दीदी और बाबू को जो आनन्द हुआ, वह कहा नहीं जा सकता। *वे प्रेम से मेरी देह चाटने लगे। तब से वे कभी* भी मुझे अकेले छोड़ कर बाहर न जाते। मैं अपने माँ-बाप का ऐसा प्यारा था।

मैं अपनी माँ के दुलार और पिता के प्यार में दिन दिन दूज के चाँद की तरह बढ़ने लगा। एक दिन, दो दिन, तीन दिन योंही दो मास बीते। मैं इधर-उधर उछल कूद करने लगा। माँ ने देखा, नहीं लिखने-पढ़ने से लड़का बहेड़ हो जायगा। अतएव रात में जब

बाल-मनोरंजन-माला—२.

सियार पाँड़े
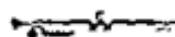
लेखक
श्रीरामवृक्ष शर्म्मा बेनीपुरी

प्रकाशक
हिन्दी-पुस्तक-भंडार, लहेरियासराय

मूल्य ।=)

निवेदन

लड़कों का स्वभाव खिलवाड़ी होता है। व पढ़ने का नाम सुनते ही भाग खड़े होते हैं। अतएव, लड़कों को पढ़ने लिखने की ओर रुचि दिलाने के लिये अबतक दो उपाय काम में लाये जाते हैं। उनमें एक है हमारे गुरुओं की पद्धति-अर्थात् ठोक पीट कर हकीम बनाना और दूसरी है वैज्ञानिक पद्धति, कि लड़कों को हँसाते खेलाते ही पढ़ा देना।

'बाल-मनोरंजन माला' इसी दूसरी पद्धति पर ध्यान रखते हुए निर्माण की जा रही है। हम इस माला में वैसी ही पुस्तकें* गथूना चाहते हैं जिन्हें देखते ही लड़के छाती से लगा लें, माँ बाप के मना करने पर भी दिन रात ऐसी पुस्तकों को पढ़ते रहें-पढ़ें और हँसें भी। साथ ही साथ इसी हँसी-खेल में उन्हें उचित उपदेश भी मिलें, जिससे उनका भविष्य उज्ज्वल हो।

यह कार्य बहुत ही कठिन और व्यय साध्य है। एक तो बाल-साहित्य का निर्माण सभी लेखक कर नहीं सकते। दूसरे उस साहित्य में मनोरंजकता भरना तो और भी कठिन होता

---

* छपी पुस्तकों के नाम टाइटिल की मार्जिन पर देखिये।

है । फिर पुस्तक लिखे जाने पर भा उसमें अच्छी छपाई और सुन्दर सुन्दर चित्र देने म बहुत कुछ खर्च करन पड़ते हैं। इतना कुछ होने पर भी हमने इस प्रकार की एक माला निकालना प्रारम्भ किया है और उसे सुलभ मूल्य में देने का हम विचार रखते हैं। आशा है, बालकों के शुभ चिंतक हमें इस कार्य में यथेष्ट मदद देंगे।

अँगरेजा में इस प्रकार की Juvenile Readers यथेष्ट सख्या मे ह। और भाषाओं की तो जाने दाजिये। बिहार से सटे हुए बगाल प्रदेश मे—बग भाषा मे इस प्रकार की अनेकों पुस्तक है। किन्तु राष्ट भाषा हिन्दा में इस प्रकार की पुस्तकों का एकदम अभाव सा है। क्या हम हिन्दी प्रेमियों के लिये यह लज्जा का बात नहा है?

'हिन्दी-पुस्तक-भण्डार ऐसा पुस्तकों के प्रकाशन का विचार बहुत दिनों से कर रहा था किन्तु कई कारण-वश, जिनका उल्लेख ऊपर हो चुका है, वह अबतक अपनी इच्छा को कार्य रूप म परिणत नहा कर सका था। किन्तु अब वह अपना उपहार लेकर हिन्दा प्रेमियों के सम्मुख खडा है। प्रत्येक हिन्दी प्रेमी बाल हितैषी सज्जन का यह कर्त्तव्य है कि उसके इस उपहार को स्वीकृत करें, उसे प्रोत्साहन दें तथा इस विषय म अपना सत्परामर्श देने मे भी न चूकें।

सचालक

समर्पण

प्रिय अनुज,

तुम्हारा नामकरण भी नहीं हुआ था कि तुम चल बसे। इस समय तुम बड़े हो स्वर्ग के देव-बालकों के साथ खेलते-कूदते तथा पढ़ते लिखते होगे।

यह पुस्तक बालकों के मनोरंजन के लिये लिखी गई है, अतएव यह तुम्हें समर्पित है।

आशा है इसे स्वीकार कर अपने विदग्ध बन्धु को सान्त्वना दोगे।

रामवृक्ष

सियार पाँडे

क्यों लड़को! मेरी कहानी सुनोगे?

॥ श्री. ॥

सियार पाँड़े

हुआँ हुआँ हुआँ, हुआँ हुआँ हुआँ

वाह ! तुम हँस क्यों पड़े ? बोलो, प्यारे बच्चों ! बोलो, तुम हँस क्यों पड़े ? मेरी बोली सुनकर तुम्हें हँसी क्यों आ गई ? मैं भी तो तुम्हारी बोली प्रतिदिन सुनता हूँ, किन्तु कभी नहीं हँसता। कभी तुम रोते रोते अपना गला बझाकर विचित्र आवाज बना लेते हो। सिसकते सिसकते हिचकी पर हिचकी लेने लगते हो। कभी हँसते हँसते अपने घर को गुँजा देते हो। कभी चिल्ला चिल्ला कर लोगों के कान की झिल्ली फाड़ने लगते हो। किन्तु

मैं इन्हें सुनकर कभी भी नहीं हँसता। फिर तुम्हारे हँसने का कारण ?

हुआँ हुआँ हुआँ, हुआँ हुआँ हुआँ

फिर वही हँसी। मुफ्त के दाँत ठहरे—ही ही करके निकाल दिये। निकट का मुँह ठहरा—ठठाकर हँस पड़े। वाहरे हँसने वाले! क्या दूसरे को दाँत और मुँह नहीं है ? खैर! हँसो—खूब हँसो। किन्तु दूसरे पर हँसने के पहले जरा अपनी ओर भी देख लिया करो। दूसरे की आँख की फूली देखने के पहले अपनी कानी आँख को भी निहार लो। मेरी बोली सुनकर आज तुम हँसने चले हो। किन्तु अपनी माँ से तो पूछो! जब तुम्हारा जन्म हुआ था तो तुम क्या बोलते थे—केहाँ केहाँ केहाँ। कहो तुम केहाँ केहाँ केहाँ करते थे कि नहीं। और यह केहाँ केहाँ बोलना भी पहले पहल तुम्हें सिखाया किसने ? अजी—इसी सियार पाँड़े ने। जब तुम्हारा जन्म हुआ, तुम न बोल सकते

थे न हँस सकते थे। मैं तुम्हारे घर के पिछ-
वाड़े जाकर चिल्लाया—हुआँ हुआँ हुआँ।
सुनते ही घर से तुम चिल्ला उठे—केहाँ केहाँ
केहाँ। तुम्हारा गला तब तक साफ न हुआ
था। इसीलिये साफ साफ हुआँ हुआँ नहीं कर
सके, केहाँ केहाँ चिल्लाये। यों, देखो तो मैं
तुम्हारा पहला गुरु हूँ। इसीलिए तो तुम
मुझे पाँडे जी कहते हो। अब तुम समझे? मैं
तुम्हारा गुरू हूँ। मुझे प्रणाम करो। हँसो
मत—प्रणाम करो, प्रणाम।

हाँ, तो अब यह तो बताओ कि तुम चल
हो किधर? अपने गुरुजी की पाठशाला को
छोड़कर अपने पुराने और पहले गुरू जी मुझ
सियार पाँडे के पास आये हो किस काम से?
क्या कहा—मेरी जीवनी सुनना चाहते हो?
मेरी जीवनी? वाह्रे मैं! किन्तु मैं अपने
मुख से अपनी जीवनी कैसे सुनाऊँ? तुम
कहोगे, पाँडेजी अपने मुख से अपनी बड़ा,

कर रहे हैं। मैं ठहरा पाँडेजी! इस छोटी सी जिन्दगी मे ही कितनी चालाकियाँ खेलीं, कितने को छकाया, कितने को उल्लू बनाया, कितनी बार विपत्ति मे फँसे और साफ कन्नी काटकर निकल आये। इस छोटे से शरीर से ही बडे बडे गजराज और मृगराज को भी नाको चने चबाये—उन्हें बद्धू बनाया। अपनी बुद्धिमानी, चालाकी, धूर्तता और समय की सूझ के ही कारण मैं धूर्ताधिराज, चातुर्यावतार, विद्या-बुद्धि निधान, सकल गुणखान श्रीमान् पडितप्रवर श्री शृगाल पाण्डेय क्रेवर दी ग्रेट के नाम से प्रसिद्ध हूँ। नाम के पीछे की पूँछ काशी की पंडित-सभा की ओर से जोडी गई है। और, आगे की सींग सरकारी युनिवर्सिटी से मिली है। हिन्दी-साहित्य सम्मेलन भी एक बढिया उपाधि देने का विचार कर रहा है। समझे ?

फिर वही रट। जीवनी सुनाइये, जीवनी

सुनाइये। मैं अपनी जीवनी क्या सुनाऊँ? वह तो ससार में प्रसिद्ध है। सस्कृत के हितोदेश और पचतत्र देखो, अँगरेजी के इसाप्स फेबुल और इन्डियन फेबुल देखो—सभी मे मेरी अकथ कहानियाँ भरी पड़ी हैं। सरकार भी मेरी कहानियों से बहुत खुश है। लड़कों की किताब में जबतक मेरी दो-एक कहानियाँ नहीं पडतीं—वह अधूरी समझी जाती है। किन्तु तुम्हारा हठ तो टूटेगा नहीं—बिना कहानी सुने मानोगे नहीं। खैर, मैं बुड्ढा भी हो चला इसलिये अब इस दुनिया से कूच करने के पहले अपनी जीवन-कहानी तुम्हे सुनाऊँगा—सभी प्रकट और गुप्त कहानियाँ तुमसे कहूँगा। और, आज कल यह रीति भी चल पड़ी है कि बडे लोग अपनी जीवनी—आत्म-चरित—स्वय लिख छोड़ते हैं। मैं भी तो बड़ा आदमी ठहरा—अत मैं ही क्यो चूकूँ? तो सुनो। किन्तु देखते रहना कहीं से कुत्ता न आजाय। क्योंकि तुम जानते ही हो

कि दुनिया में वह मेरा सब से बड़ा शत्रु है।

तुम्हारी गाड़ी के पीछे जो वह बड़ा खढ़ौर है वहीं मेरा जन्म हुआ। मैं अपने माँ-बाप का पहला और इकलौता लड़का था। अतएव मेरे आदर-सम्मान का क्या पूछना ? वे मुझे अपनी आखों की पुतली सा सयोग रखते। एक पल भी वे मुझे अपने से दूर न करते। ज़रा भी मुझे अपनी आँखों से दूर होने पर वे क्या क्या न कर बैठते इसका कोई ठिकाना नहीं। एक दिन की बात है। सुनकर तुम खूब हँसोगे। दीदी और बाबू दोनों किसी काम से बाहर चले गये थे। मैं औघी के मारे अपनी सोंध के एक एकान्त स्थान मे जाकर सो रहा। इतने में वे आ पहुँचे। सोंध मे मुझे न देख कर पागल हो गये। इस जगल मे देखा, उस जगल में देखा। इस सोंध में ढूँढा उस सोंध मे ढूँढा। किन्तु मेरा कहीं पता नहीं। कम्बख्ती की मार। मैं जिस सोंध में सो रहा था, वहीं

कई बार जाकर भी हड़बड़ी मे मुझे देख न सके। बस, पिता-माता दोनों शोक में पागल हो कर का-हुआँ का-हुआँ कह कर रो उठे। रोने की आवाज सुन कर सभी अड़ोसी-पड़ोसी भी का-हुआँ का हुआँ करते वहाँ दौड़ पड़े। इस रोने-चीखने से अजीब कोलाहल हुआ। मेरी नींद टूट गई। दौड़ता हुआ वहाँ जा पहुँचा। मुझे पाकर मेरी दीदी और बाबू को जो आनन्द हुआ, वह कहा नहीं जा सकता। वे प्रेम से मेरी देह चाटने लगे। तब से वे कभी भी मुझे अकेले छोड़ कर बाहर न जाते। मैं अपने माँ बाप का ऐसा प्यारा था।

मैं अपनी माँ के दुलार और पिता के प्यार में दिन दिन दूज के चाँद की तरह बढ़ने लगा। एक दिन, दो दिन, तीन दिन योंही दो मास बीते। मैं इधर-उधर उछल कूद करने लगा। माँ ने देखा, नहीं लिखने-पढ़ने से लड़का बहेड़ हो जायगा। अतएव रात में जब

पिताजी अपनी जजमनिका से लौटे तो माँ ने कहा—या हुआं हुआ हा अर्थात् बच्चे के हाथ में भट्ठा पड़ना चाहिये। पिताने कहा–हा' हा. अर्थात् हा हा। बस, पिताजी न अपना पत्रा खोला। मेष, वृष, मिथुन, कर्कट आदि गिनते गिनते आगामी बृहस्पतिवार को पढाई शुरू करने का दिन ठीक किया। मैं यह सुन कर खूब खुश हुआ, वाह ! अब मै अन्य साथियों के साथ उस नदी किनारे के स्कूल में जाऊँगा, पढूँगा, गेंद खेलूँगा। बच्चो ! तुम जजमनिका, पत्रा, स्कूल आदि के नाम सुन कर हँसो मत। क्योंकि तुम जानते ही हो कि हम सियार पाँड़े ठहरे। बिना पढे-लिखे हमारा काम चल नहीं सकता। मेरे पिताजी सब शास्त्रों के जानकार थे। नदी के किनारे का वह बड़ा जगल उन्हीं की जजमनिका मे था। अब पिता के मरने के बाद मैं ही वहाँ का पुरोहित हूँ। समझे ?

बृहस्पति को सन्ध्या को मुझे साथ लेकर

पिताजी नदी किनारे के स्कूल में पहुँचे। राह में आगे पिताजी चलते थे पीछे मातजी और बीच मे मैं। रास्ते भर वे दोनो चिंता से चारो ओर देखते थे कि कहीं कोई दुष्ट मुझ पर धावा न कर दे। स्कूल में मेरी पढाई का श्री-गणेश देखने को मेरे बहुत से जाति-भाई इकट्ठे हुए थे। मेरी उमर के भी बहुत से लड़के थे। वे भट्ठा पकड़ चुके थे। उनमें से कोई कहता डर क्या है ? कोई कहता—कुछ भी नहीं। एक कहता—यही जरा गुदगुदी लगेगी। दूसरा कहता—हाँ कुट कुट करके कुछ काटने सा मालूम पडेगा। मैं अवाक् था। इतने ही में मैं एक बिल के निकट बैठाया गया। पिताजी ने मेरी पूँछ को उसी बिल में घुसेड दिया। माता बोली–देखना देह मत हिलाना। मैं बुद्धू ऐसा बैठा रहा। कुछ ही देर में मेरी पूँछ में कुछ कुट-कुट कर काटने लगा। ओफ। कैसा पीड़ा। मैं झट उछल पडा। पीछे फिर कर

देखता हूँ कि कई छोटे छोटे केकड़े मेरी पूँछ में लटक रहे हैं। पिता-माता सन्तुष्ट हुए। सभी पहली बार ही मेरी यह सफलता देख बोल उठे—जीयेगा तो लड़का बडा आदमी होगा।

मेरी पढाई का यही श्रीगणेश था, यही भट्ठा पकड़ना था। वहाँ से सभी घर आये। जितने आत्मीय कुटुम्ब आये थे सभी को भोज दिया गया। वह भोज कितने धूम-धड़ाके से हुआ था, उसका वर्णन मैं कहाँ तक करूँ, बालक बालिकाओ।

तुम स्कूल मे पढ़ते हो, तुम्हारे भाई कालेज में। मेरा स्कूल वही नदी का किनारा था। मैं अब वहाँ नित्य जाता और नई नई विद्या सीखता। अब मैं अपना भोजन आप उपार्जन कर लेता। घोंघों-केकड़ों से होते होते बकरियों के छोटे-छोटे बच्चों पर हाथ फेरने लगा। बाबू और दीदी जब मेरे इन कार्यों को

देखते तो कहते—वाह ! लड़का पढ़-लिख कर पूरा पंडित हो गया । अब इसे कपड़े-लत्ते या खाने-पीने में कोई कष्ट न होगा। बच्चा जीयेगा तो एक रोटी सुख से कमा खायगा ।

एक दिन की बात याद आती है। याद आते ही हँसी भी आ जाती है और अपनी चतुरता पर घमंड भी हो आता है । क्यों नहीं, वह काम ही ऐसा था ।

सन्ध्या का समय था। मैं पिताजी के साथ अपनी जजमनिका में निकला। जाते जाते एक बाघ के घर के निकट पहुँचा । वहाँ बाघ का बच्चा खेल रहा था । वाह ! कितना मोटा ताजा है। कैसा गुल-थुल शरीर है। उसका माँस कितना नरम, कितना स्वादिष्ट होगा । मैंने पिताजी से कहा—मैं बाघ का बच्चा खाऊँगा । पिताजी बोले—क्योंरे बेवकूफ ! कहीं कोई ऐसा भी सोचता है। सियार-गीदड़ होकर बाघ का बच्चा खाने की साध करना। चुप रह !

बाघ सुनेगा, तो अभी मुझे और तुझे दोनो को चट कर जायगा। किन्तु मै कब मानने वाला। रोने लगा। पिता ने देखा, यह न मानेगा। तब मुझे वहीं एक झाडी में रखकर राम नाम जपते आगे बढ़े। बाघ इनकी देह की गध से ही पहचान गया। बाघ-बाघिन दोनों गुर्रा कर पिताजी पर झपटे। पिताजी अपना पैर सिर पर रखकर भागे। वह दोनों उनके पीछे पडे। मुझेएक युक्ति सूझी। बाघ-बाघिन दोनों पिताजी को पकडने चले थे। यहाँ उनका बच्चा अकेला था। मैं झटपट बाघ की माँद में चला गया। और, उसके बच्चे की गर्दन पकडे यह ले वह ले दौडता-उछलता अपनी सोध में हाजिर हुआ। माँ बाघ के बच्चे को देखते ही डर गई। मैंने उससे सब कहानी कही। उसने मेरी पीठ ठोंक दी। तब तक बाबूजी भी पहुँच गये थे। उन्होंने मुझे छाती से लगा लिया। माता पिता दोनों कहने लगे—ओह! लड़का

लड़का होनहार है। जिस काम को बड़े-बूढ़े पाँड़े भी नहीं कर सकते, वह इसने बात की बात में कर डाला। पिताजी ने यह घटना इसके पिता से कहा, उसके पिता से कहा। माताजी यह घटना उसकी माँ से कह आई, इसकी माँ से कह आई। समूचे गाँव में मेरी बुद्धिमानी का ढिढोरा पिट गया। सभी कहते—लड़के ने कमाल किया!

लड़को! जिस तरह तुम लोगा में एक राजा होता है, उसी प्रकार हम लोगों में भी होता है। जब हमारे राजा को यह खबर मिला, तो उनकी खुशी का कोई ठिकाना न रहा। एक सियार के छोकड़े ने एक बाघ के बच्चे को मार खाया, यह क्या हमारी जाति के लिये कम अभिमान की बात थी? राजा साहब मेरे घर पर आये। मुझे देखा—मेरी बड़ी बड़ाई की। उन्हे एक लड़की थी। मेरी शादी उस लड़की से करने की बात मेरे पिता से कही। पिताजी

ऐसा मौका कब छोड़ने वाले थे ? शादी की बात पक्की हो गई।

तुम जानते ही हो कि दिन में धूप लगी रहने पर, जब वर्षा होती है तभी हम लोगों का व्याह होता है। जहाँ धूप लगी रहने पर वर्षा हुई कि तुम लोग आँगन में नाचने गाने लगते हो और चिल्लाने लगते हो कि गीदरा-गीदरी की शादी होती है। बात ठीक है-हमारा वही लगन है। इसीलिये मेरी शादी बहुत दिनों तक रुकी रही। जब अकस्मात् एक दिन ऐसा हुआ तो मेरी शादी हुई। शादी की रात में, मेरे विवाह के उपलक्ष्य में, जैसी धूम-धाम, नाच-गाना, बाजा और रोशनी आदि हुए उन-का वर्णन करना कठिन है। मेरे गाँव के एक लड़के ने—निस्सदेह वह मेरी जाति का है-एक कविता लिखी थी। उसे पढ़ कर कुछ अन्दाज लगा सकते हो।

अधिक मछली ठूँस ठूँस कर खा लेने के कारण गर्मी से उस दिन घरवाली को नींद नहीं आई थी। प्यास लगने पर वह भानस घर के ओसारे की घलथरी पर पानी ढारने आई। घर से यह चटपट आवाज आती देख वह सहमी। जाकर देखती है तो घर का फाटक खुला हुआ है—आज जलदी में वह घर का फाटक बन्द करना भूल गई थी। उसने झट फाटक बन्द कर दिया। क्रोध में आकर अपने घरवाले को उठाया। झटपट चिराग जलाया। एक मुस्तण्ड डंडा लिये घरवाला दरवाजे पर आ धमका। उसके बगल में घर-वाली दीया लिये खड़ी थी। पिताजी अपनी मृत्यु निकट देख पुक्की मार के रो उठे—बूढ़े का कोमल कलेजा ठहरा। उनका रोना क्या था, मृत्यु को खुद न्यौता देकर बुलाना था। घरवाली ने समझा था कि कुत्ता है। गीदड़ की आवाज सुनते ही घरवाला क्रोध में काँप उठा।

तब तक पिताजी की सुरीली आवाज सुन कर कुछ कुत्ते भी वहाँ इकट्ठे हो गये—तुम जानते ही हो कि पाजी कुत्ते हमारी जाति के कट्टर दुश्मन हैं। बालको! आगे मैं अपने श्रीमुख से अपने पिताजी की दुर्गति कैसे वर्णन करूँ? हाँ, जब दूसरे दिन मैं उनकी तलाश में निकला तो गाँव क गोयरे मे उनके लहू-लुहान मृतक शरीर को पाया। आह! उनके शरीर को दुष्टों ने किस बेरहमी से नोचा-पीटा था!

घर पर जब यह समाचार लेकर मैं पहुँचा नो किस तरह रोना-कन्ना मचा, वह वर्णन करना कठिन है। हुआँ हुआँ-हा हा की ध्वनि से समूचा खढोर और जगल गूँज गया। पीछे मैंने उनका श्राद्ध शास्त्रानुकूल किया। भोज-भात का क्या पूछना? इसक कुछ दिन के बाद माताजी भी स्वर्गलोक सिधारीं। पिताजी के शोक मे उन्होंने खाना-पीना सब छोड दिया था। इन घटनाओं को देख मैंने हाथ मे कुश

और जल लेकर शपथ खाई कि आज से कभी भी गाँव में न जाऊँगा। तुम देखोगे कि तब से मैं गाँव में हाला-हाली कभी नहीं जाता। बात साफ तो यों है कि जब दो एक बार मैंने अपनी प्रतिज्ञा, अत्यन्त आवश्यकता पहुँच जाने पर, तोड़ी भी तो उसका नतीजा अच्छा नहीं हुआ। होता भी कैसे, कसम खाकर फिर वही काम करना क्या कम पाप है ?

माता पिता के मरने पर घर गिरस्ती का बोझा हमारे सिर पर पड़ा। जब तक वे जीते थे मैं पूरा नवाब बना रहता था—मेरी स्त्री भी अपने को रानी से एक पाई कम न समझती। किन्तु अब ? अब तो—

भूल गया राग रंग भूल गई छकड़ी।
तीन चीजें याद रहीं नोन तेल लकड़ी॥

मेरी सारी नवाबी भूल गई। भोजन पान कपड़ा-लत्ता सब का इन्तजाम मुझे स्वय करना पड़ता। पिताजी खब होशियार थे, इसलिये

उनके जीवन भर कोई दुर्घटना न घटी। किन्तु मुझे दुनिया का कुछ अनुभव नहीं था, इस लिये उनके मरने के थोड़े ही दिन बाद एक काण्ड खड़ा हो गया। मैं जिस खंढोर में रहता था, उसी के निकट एक गाछी थी। उस गाछी मे एक बन्दर रहता था। बन्दर का एक छोटा-सा बच्चा था। एक दिन वह बच्चा उसे न मिला। बन्दर बन्दरी दोनों घबराये। इस गाछ पर खोजा उस गाछ पर खोजा, इस झुरमुट में देखा उस झुरमुट में देखा। बच्चे का कहीं पता न चला। गाछ की ऊँची डाली पर चढ़कर किचिर-मिचिर करके जोर से पुकारा, किन्तु बच्चे की आवाज कहीं से न आई। अन्त मे उन दोनों ने निश्चय किया कि हो न हो मैं ही उनके बच्चे को खा गया हूँ। सुनते हैं, बन्दरी ने मुझे उस बच्चे के पीछे पीछे घूमते हुए देखा भी था। यही नहीं, शायद मेरी सोंध के निकट उस बच्चे की पूछ की हड्डी भी पाई गई थी।

भगवान जानें, बात कहाँ तक सत्य है? मैं मछली खाता नहीं, माँस खाता नहीं। जिस दिन उसका बच्चा गायब हुआ था उस दिन मैं एकादशी किये हुए था—जल भी पीना बन्द था। राम राम! मैं उस दिन क्या उस बच्चे को खा सकता था? सरासर झूठी बात। किन्तु बन्दर को यह सब सोचने विचारने का दिमाग कहाँ से आया? वह तो बिगड़ पड़ा कि हो न हो तुम्हीं ने मेरे बच्चे को मार खाया है, और मैं भी तुम्हारे बच्चे को मार कर इसका बदला लूंगा। उस दिन से मैं सावधान हो गया। अपने बच्चे को कभी भी अकेले बाहर न जाने देता। न जाने वह उपद्रवी बन्दर क्या कर गुजरे?

जब बन्दर ने देखा कि इसका बच्चा हाथ न आयेगा तो उसने एक दूसरी चाल चली। एक दिन वह प्रात:काल अपने घर से निकला और नदी किनारे के उस बड़े जंगल में

पहुँचा। वहाँ एक बाघ रहता था। बन्दर ने उसके घर की किवाड़ खटखटाई। बाघ सोया हुआ था। अपनी नींद में बाधा पड़ते देख कर वह गरमाया हुआ बाहर निकला। ज्यों ही उसने किवाड़ खोला कि बन्दर ने आगे बढ़ के कहा—'प्रणाम मामाजी।' बेवकूफ बाघ इस प्रणाम पर फूल कर कुप्पा हो गया। बड़े प्रेम से उसे आशीर्वाद दिया। दोनों तरफ से कुशल-क्षेम पूछे जाने के बाद वे दोनों भीतर घर में गये।

घर में एक पलँग पर बाघ खुद बैठा और बन्दर के लिये एक कुरसी रखदी। बन्दर भी शान से कुरसी पर डट गया। पीछे बाघ ने पूछा—'कहो भगिना, किधर चले हो? देखो, आज पाँच-सात दिन से लगातार मेघ बरस रहा है। तुम्हारा खाना पीना कैसे चल रहा है?' बन्दर ने कहा—'मेघ बरसे या पत्थर, मुझे क्या? मैं तो गाछ पर रहता हूँ, गाछ का

फल-पत्ता खाता हूँ। कहिये मामाजी, आप का भोजन पान कैसे चलता है ?' बाघ ने कहा—'भगिना, कुछ न पूछो, आज पाँच सात दिन से पेट में एक दाना अन्न न पड़ा है। पेट भूख के मारे कुलकुल कर रहा है। भूखे पेट दिन-रात सो कर बिताता हूँ। इस वर्षा में कहाँ जाऊँ, क्या खाऊँ ? अच्छा भगिना, तुम तो गाछ पर रहते हो, कहो तुम्हारे आस-पास कोई अच्छा शिकार है ?' बन्दर तो यह चाहता ही था। झट बोल उठा—'है क्यों नहीं ? मामा, आपके चलने भर की देरी है। मेरे घर के निकट ही एक सियार की सोंध है। वहाँ दो प्राणी सियार रहते हैं। आह मामा, उसका बच्चा इतना मोटा ताजा और गुलथुल है कि उसके देखते ही तुम्हारे मुँह से लार न निकले तो मुझे अपना भगिना न कहना। ओफ। तुम व्यर्थ इतने दिनों तक उपवास करते रहे। कम से कम मुझे तो इसकी खबर

दे देनी थी।' बन्दर की बात सुनते ही बाघ का जी चटपटा उठा। किन्तु फिर कुछ सोच कर उसने कहा—'भगिना, तुमने बतलाया तो ठीक किन्तु मुझे कुछ शक है। तुम सियार को शायद न पहचानते हो, किन्तु मैं खूब पहचानता हूँ। बहुत दिनों की बात है कि मुझे एक लड़का हुआ था। हाय! वह लड़का कैसा अच्छा था। किन्तु एक दिन एक सियार आया। मै उसकी ओर लपटा—इतने ही मे लौट कर देखता हूँ कि मेरा बच्चा गायब! पीछे मालूम हुआ कि जब मैं उस सियार के पीछे दौड़ा उसके अन्दर अन्दर ही दूसरा सियार आकर उस बच्चे का ले भागा और मार खाया। भगिना, सियार की जाति बड़ी धूर्त होती है, मैं उसके निकट नहीं जाऊँगा। भूखों रहना अच्छा, किन्तु सियार के निकट जाना अच्छा नहीं। जीऊँगा तो कितने शिकार मिलेंगे।"

किन्तु बन्दर भी बडा बतबनवा ठहरा। खूब

पुट पट्टी देकर उसे आखिर चलने को तैयार ही कर लिया।

मैं घर से बाहर निकला तो देखा कि आगे आगे बन्दर और पीछे पीछे बाघ चला आ रहा है। मैं सब रहस्य समझ गया कि यह बंदर की शैतानी है। किन्तु बच्चू को आज ही मजा चखाऊँगा। मैं झट अपने घर में घुस गया और पँडाइन से सब हाल कहा। फिर अपने बच्चे के कान ऐंठने लगा। वह एकबारगी केहाँ केहाँ केहाँ चिल्ला उठा। मैंने जोर से कहा—'राक्षस बच्चा कहीं का। भर दिन खाव खाव करता रहता है। जैसी मा वैसा बेटा। कल ही तो तुमने दो बाघ और तुम्हारी मा ने तीन बाघ खाये। तो भी तुम्हारा पेट भरा नहीं। बाबा, यह पेट है कि सन्दक!' मेरी बातें सुनते ही एक पैर दो पैर करके बाघ पीछे हटने लगा। उसने बन्दर से कहा—'सुनते हो भगिना! कल ही ये पाँच बाघ खा चुके हैं

सियार पाँड़े

सात बाघ लाने के लिये ले गया बैमाना ।
लाया केवल एक बाघ ऐसा तू बेईमाना ॥

अपनी पूँछ बन्दर की पूछ से बाँध दी। फिर दोनों आगे बढ़े। मैंने देखा, ख़ूब उल्लू फँसा है। ज्यों ही वे दोनों परस्पर पूछ बाँधे मेरी सोंध के निकट आये कि मैं तमक के बाहर निकला और कहा— क्यों रे

सात बाघ लाने के लिये ले गया बयाना।
लाया केवल एक बाघ, ऐसा तू बेईमाना॥

लाओ अभी छ बाघ और नहीं तो तुझे भी खा जाऊँगा। बेईमान कहीं का—फेर दे मेरा बेआना।' इतना सुनते ही बाघ सिर पर पैर देकर भागा। यह ले वह ले आँखों से ओझल हुआ। बन्दर की पूछ बाघ की पूछ से बँधी हुई थी। बाघ के भागते ही वह उसके पीछे पीछे घिसटाने लगा। जब बाघ उछलता तो वह इधर गिरता, उधर गिरता। चें चें करते हुए थोड़ी ही देर में उसके प्राण पखेरू उड़ गये। कहो बच्चो! जो दूसरे को बुराई करना चाहता है, उसको दुर्गति इसी तरह होती है कि नहीं?

इसके साथ ही साथ मेरी बुद्धि की भी तारीफ करो कि किस प्रकार इस भयानक आफत को मैंने दूसरे के सिर टाला।

कुछ दिनों के बाद मेरी स्त्री ने दो बच्चे एक साथ ही जने। अब मेरा परिवार फैल गया। हम दो प्राणी, और तीन बच्चे—कुल पाँच हुए। मुझे अकेले ही अब पाँच आदमी का खाना-पीना जुटाना पड़ता। मैं बड़े ही सोच में पड़ा। बकरी या भेड़ के बच्चे से अब काम चल नहीं सकता था। क्या किया जाय? लड़कों को खिलाना जरूरी था। कई दिन तो ऐसा हुआ कि जो कुछ मिला, बच्चों को खिला दिया गया और हम दोनों -पाँड़े पँड़ाइन—को चुप-चाप उपवास में ही रात काटनी पड़ी। अतएव मैं इस धुन में लगा कि किसी बड़े मुल्ले को फँसाना चाहिये। यों उपवास करने से कितने दिन चलेंगे? मेरे सौभाग्य से उस जंगल में ही एक बड़ा हाथी रहता था। लड़कों! उस हाथी

के बड़े बड़े दाँत और मोटी लम्बी सूँड़ का वर्णन मैं क्या करूं। तुमने बहुत से हाथी देखे होंगे। लेकिन मैं सिर की कसम खाकर कह सकता हूँ कि उतना विशाल हाथी तुमने नहीं देखा होगा। मैंने सोचा कि अगर इस हाथी को किसी तरह फँसाया जाय, तो बहुत काम चले। महीनों की कौन सी बात, बरसों तक खूब छक के खाया जाय। किन्तु यह फँसेगा कैसे ? उसके बड़े बड़े दाँतों के डर से बड़े बड़े बाघ-सिंह की हिम्मत नहीं होती कि उसके निकट जाँय। फिर मुझ ऐसे क्षुद्र जीव की कौन सी बात ?

किन्तु मैं जितना भी छोटा जानवर क्यों न होऊं, बुद्धि में तो सबों से बढ़कर हूँ। चालाकी मे मेरे जोड़ का ससार में कोई नहीं। लड़को, माफ करना। तुम मनुष्य लोग भले ही रेल-तार, अट सट जो चाहो बना लो और अपनी बुद्धि पर घमंड करो। किन्तु धूर्त्तता और

चालकी मे मनुष्यों की भी पहुच मुझ ऐसी नहीं है। हाँ, अगर कुछ कुछ मेरा मुकाबला कर सकता है तो कौवा। बस चिडियों में कौवा और पशुओं में सियार–ये ही दो ससार में सब से अधिक धूर्त हैं। समझे ?

मैं एक दिन भोर ही उठा। अपने पत्रा को खूब उलट-पुलट कर एक अच्छी यात्रा ठीक की। उस यात्रा के ठीक समय पर मै अपने घर से निकला। जाकर देखता हूँ तो हाथी सेमल के एक बड़ी डाल को तोडे उसका पत्ता प्रेम से खा रहा है। मैंने जाते ही उसे—हे वन के राजा। मैं तुम्हे प्रणाम करता हूँ–इतना कह खूब झुक कर प्रणाम किया। 'वन के राजा' सम्बोधन सुनते ही हाथी अभिमान में फूल उठा। उसने कहा—'कहिये पाँडे जी महाराज, आप चले किधर ? कुशल तो है ?' मैंने सिर झुका कर और हाथ जोड़ कर कहा—'महाराज। आपकी दया से सब प्रकार कुशल है।

एक बहुत ही आवश्यक काम से महाराज के निकट आया हूँ।' हाथी ने कहा—'कौनसा काम, कहिये कहिये। आपको कोई दिक तो नहीं करता। बताइये, अभी में उसकी पूरी खबर लूँ।' मैंने कहा—'महाराज जब तक आपकी कृपा है, तब तक मुझे कौन दिक कर सकता है? किन्तु महाराज! अपने पर कुछ कष्ट न होने पर भी श्रीमान् के दुःख से दुःखी अवश्य हूँ।' हाथी घबड़ा कर बोला—'पाँड़ेजी मुझे कौनसा दुःख है? देखिये, मैं आनन्द से जंगल में विहरता हूँ, जो मन भाता है खाता हूँ, सभी मेरे डर से चूँ तक नहीं करते।' मैंने कहा महाराज! आपकी अखण्ड प्रभुता देख कर ही तो मुझे दुःख होता है।' हाथी ने कहा—'सो क्यों?' मैंने उत्तर दिया—'सो क्यों? महाराज! देखिये आपका शरीर कैसा सुन्दर है, कितना विशाल है। सूँड़ की बनावट कैसी अच्छी है मानो सोने का खम्भ लटक रहा हो। दाँत कैसे उजले

और चमकीले हैं—मानो चाँदी पर हीरे जड़े हों। बड़े बड़े सुन्दर कान सदा आपको पंखे झलते हैं। मैं कहाँ तक कहूँ, आपका सारा शरीर ही ऐसा सुन्दर है कि कोई भी देखते ही कह सकता है कि पशुओ के राजा यही हैं। इतना होने पर भी आप पशुओ के राजा नहीं समझे जाते और वह छोटा-सा सिंह राजा बन बैठा है। राम राम। उसका मुँह कैसा भयानक है, समूची देह बड़े बड़े भद्दे केसों से ढँपी हुई, कमर इतनी पतली कि अगर कोई एक धौल जोर से जमादे तो टूट जाय। आप ही कहिये कि क्या वह राजा होने के योग्य है?'

हाथी ने कहा—'सो तो ठीक है पाँडे जी, किंतु अपना वश क्या है?' मैंने कहा—'वश क्यों नहीं है महाराज। कल मैंने जंगल के सभी पशुओं को इकट्ठा किया था। एक बड़ी सभा की। मैंने लोगों को सारी बातें समझाई। मैंने आपकी पूरी प्रशंसा की—'ओह! कैसा विशाल

जानवर, कैसा सुन्दर, कैसा सीधा सादा, कैसा निरीह-न किसीको मारे न पीटे, आप लोग हाथी को ही वन का राजा बनाइये-इस दुष्ट हत्यारे सिंह को राजगद्दी से हटाइये।' मेरी बात सुनकर सभी तैयार हो गये। अभी अभी महाराज उस झील के उस पार सभी पशु फिर एकत्र हैं। वे चाहते हैं कि आप वहाँ चलें और सभी के सामने आपका अभिषेक हो, आपको राजा बनाया जाय। मैं इसीलिये इस समय महाराज के पास आया हूँ। देखिये, मैंने पत्रा देखा है। कुल एक घड़ी समय बाकी है। इसके अन्दर ही आपका अभिषेक हो जाना चाहिये। नहीं तो फिर वर्ष दिन तक ऐसा मुहूर्त न आयेगा। इसलिये, चलिये महाराज, देर न कीजिये। वहाँ पशु सब भी अकुलाते होंगे। महाराज, यह मौका न खोइये।'

उल्लू हाथी बातों में आ गया। खाना-पीना छोड़ कर वह मेरे पीछे दौड़ा। मैं आगे

आगे छलाँग भरता बढ़ता गया। जंगल के बीच में एक झील थी। झील का पानी तो सूख गया था, किन्तु खूब कीचड़ भरी थी। मैं इसी कीचड़ में हजरत को अटकाना चाहता था। अतएव, ज्यों ही उसके निकट पहुँचा त्योंही हाथी से कहा—'महाराज, बहुत देर हो गई है। इस झील को घूम कर पार करने से अभिषेक का समय टल जायगा। इसलिये बड़ी अच्छी बात होती अगर श्रीमान् इसी रास्ते होकर सीधे चले चलते। पानी भी तो नहीं है।' हाथी तो राजा बनने की धुन में अंधा बना था। झट तैयार हो गया। मैं छोटा जीव ठहरा। उस कीचड़मयी झील में बखूबी चलने लगा। किन्तु कुछ ही दूर चलने पर हाथी के पैर फँसने लगे। वह बोला—'पाँड़े जी! देखिये पैर फँस रहे हैं।' मैंने कहा—'महाराज! जल्दी कीजिये। बात करने का समय नहीं है—बढ़ते आइये।' कूँथ-काँथ कर वह कई कदम

और आगे बढ़ा। फिर बोला—'पाँडे जी, जरा देखिये तो। अब तो चला नहीं जाता।' मैंने कहा—'वाह साहब, क्या बिना मेहनत के ही राजा हो जाइयेगा। कुछ कष्ट तो करना ही होगा। हिम्मत न हारिये—पैर बढ़ाइये।' किन्तु अब पैर क्या खाक बढ़े? वह जितनी ही कोशिश कर पैर उखाड़ना चाहता, उतना ही उसके पैर धँसते और फँसते जाते। जब अपना कोई वश चलते नहीं देखा तो आखिर में वह अधीर होकर बोला—'पाँडे जी, अब पैर तो नहीं उखड़ते। कृपा कर मुझे बचाइये। मैंने हिम्मत हार दी।' मैंने जब देखा कि अब यह उल्लू ठीक से फँस गया तो झिड़क कर कहा- मूर्ख! आज तुमने मुझे भी बेवकूफ बनाया! वहाँ सब लोग इकट्ठे हुए तुम्हारी राह जोहते होंगे। भला, वे मुझको क्या कहते होंगे? यदि ऐसी बात थी, तो तुमने मुझ से पहले ही कह दिया होता। झील के किनारे ही किनारे

जाते। खैर, अब अपनी वेवकूफी का फल चखो। मैं चला।' मैं आगे बढा। हाथी पुक्का मार कर रोने लगा। गिड़गिड़ा कर बोला—'पाँडे जी! मैं राजा बनने से बाज आया। मुझे बचाइये। दुहाई पाँडे जी की।' किन्तु पाँडे जी को क्या पड़ी थी उसको बचाने से? कहाँ लोग इकट्ठे थे और कहाँ राजा बनाना था? यह सब झूठमूठ का जाल रचकर तो मैं उसे फँसाना चाहता था। अब जाल में बझे हुए शिकार को कौन शिकारी छोड़ता है? और यदि मैं चाहता भी, तो उस पहाड़ ऐसे जानवर को क्या मैं ऊपर कर सकता था? तुम्हीं कहो, प्यारे बालको, तुम्हीं इन्साफ करो। अन्त में मैंने बिगड़ कर कहा—'जा मूर्ख इसीमें सड़ा कर। क्या इसी अक्लि पर तू राजा बनने चला था? बेवकूफ कहीं का—

छोटे से सियार पाँड़े का तुमने भेद न जाना।
जगल का राजा फिर कैसे बनता अरे अजाना॥'

इतना कह कर मैं वहाँ से चल पड़ा। हाथी पुकार पुकार कर रो रहा था, किन्तु मैंने कुछ भी ध्यान न दिया। जब कुछ दिनों के बाद आया तो देखा कि हाथी मरा हुआ है। पहले खुद मन भर माँस खाया। पीछे अपने बाल-बच्चे को बुला लाया। उन लोगों के भी ठूँसठूँस कर खा लेने पर बहुत-सा माँस अपने घर में जुगता कर रख दिया। पीछे देखा कि अधिक दिन रहने पर और माँस सड़ जायगा। इसलिये अपने जाति भाई को न्यौता देकर एक बड़ा-सा भोज किया। भोज कई दिनों तक चला। उस धूमधाम का वर्णन मैं तुमसे क्या करूँ। गिरा अनयन नयन बिनु बानी।

किन्तु 'अति सर्वत्र वर्जयेत्'। जो दूसरों को ठगता है, वह आप भी कभी जरूर ठगायगा। यह अटल नियम है। मैं भी इस नियम से अलग नहीं हूँ। यद्यपि बात खोल देने पर

मेरी शिकायत ही होगी, किन्तु मैं छिपाना नहीं चाहता। जब अपनी जीवनी सुनाने हो बैठा हूँ तो खोल खोल कर सभी बातें कहूँगा। तुम देखोगे कि यद्यपि मैं भी कई जगह छक चुका हूँ तथापि छकाये जाने पर भी, हार जाने पर भी, मैंने बड़ी चालाकी से उस हार को भी जीत में बदल लिया। क्यों न हो? मुझ ऐसा धूर्त संसार में है कौन? वाह रे मैं!

तो सुनो। तुम्हारे गाँव में अभिलाख पाँडे नामके एक आदमी रहते थे। यद्यपि वे दो पैर वाले आदमी ही थे, किन्तु नाम का प्रभाव भी तो कुछ होता ही है। पाँडे होने के कारण वे भी कुछ कम धूर्त नहीं थे। उस पोखरे के बगल में उनका एक खेत था। खेत में मकई थी। जब मकई के बाल में दाने पड गये, तो मैं वहाँ जाने-आने लगा। मैं बखूबी जानता था कि पाँड़ेजी लँगड़े हैं। वे मचान पर से जल्दी उतर न सकेंगे। इसलिये मैं निडर हो

कर रात में जाता और पटापट मकई का बाल तोड़ कर खूब खाता। थोड़ा खाता, अधिक नुकसान करता। पाँड़ेजी मचान पर से हा-हा हू-हू करते, बाँस की तुरही बजाते, कटर पीटते, किन्तु मैं कब टलने वाला। मैं तो जानता ही था कि पाँडेजी का यह सब कुछ ढोंग ही ढोंग है। न वे उतर सकेंगे और न हमारा कुछ बिगाड़ कर सकेंगे। फिर मैं डरूँ क्यों ?

एक रात चाँदनी खिली हुई थी। टहाटही इँजोरिया थी। मैं पाँडेजी के खेत में पहुँचा। एक एक कर बाल तोड़ने और खाने लगा। किन्तु पाँडेजी एकबार भी नहीं चिल्लाये। मैंने समझा, बेचारा चिल्लाते चिल्लाते थक गया है। फिर क्या था, खूब घूम घाम कर लगा गुलछर्रें उड़ाने। जब घूमते घूमते एक जगह पहुँचा तो देखा कि एक छोटे से कुण्ड में पानी भरा है और उसमें मछलियाँ चुलबुल कर

रही हैं। उस चाँदनी रात में ऊपर आने पर उनके शरीर की चकमकाहट मेरी आँखों को चकाचौंध मे डाल देती। ओह! मेरा मन लुसफुसाने लगा—मुँह में पानी भर आया। इन्हें खाना चाहिये। किन्तु किस प्रकार? उस कुंड का मुँह कुछ छोटा था—पीछे पता चला कि एक घैला गाड़ा गया था और उसी में मछलियाँ थीं। खैर, घैले का मुँह तँग था और मछलियाँ खाना भी जरूर था। पहले मैंने अपनी पूँछ उसमें घुसेड दी। किन्तु ये केकडे थोडे ही थीं, जो उसे पकड लेतीं। हार दार के पूँछ खींच ली। अब सिर को ही किसी कदर उसमें ठूँसने की सोची। एक मरतबा, दो मरतबा, तीसरे मरतबा जोर करते ही सिर नीचे चला गया। मैं खूब खुश हुआ। दो-एक मछलियाँ जो मुँह के नीचे आईं, उन्हें प्रेम से चखा भी। किन्तु यह क्या? कुछ ही देर में दम घुँटने लगा, साँस फूलने लगी। मालूम होता

था, औंधा कर प्राण अभी निकल जायँगे। मैंने अपना सिर ऊपर खींचा। किन्तु यह क्या ? वह ऊपर आता ही न था। कोशिश की, फिर कोशिश की। किन्तु जरा टससे मस नहीं। मैं घबड़ाया। लगातार कोशिश करने लगा। सारा शरीर पसीने से लथपथ हो गया। पैर की नोंच-खसोट स उस जगह कितने गड्ढे हो गये। जब किसी उपाय से छुटकारा होते न देखा तो अपनी मृत्यु को निकट जान एक बारगी पुक्की मार के रोने लगा—हुआँ हुआँ हुआँहा हा हा। अर्थात् हाय हाय मैं बेमौत मर रहा हूँ। मेरे रोने की आवाज सुनते ही पाँड़े चिल्ला उठा—हुले हुले हुले। पाँड़े की आवाज सुनते ही गाँव से कुछ लड़के कुत्तों को लेकर हल्ला करते हुए दौड़े। लड़कों का हल्ला और कुत्तों का भौंव भौंव निकट—निकटतम आने लगा। मैं समझ गया कि यह सब कुछ इस खूसट पाँड़े की कार्रवाई है—आज दुष्ट ने मुझे

बेमौके मारा। अतएव एक बार अन्तिम कोशिश करने की ठानी। अपने मृत माता पिता का ध्यान किया। अपने पाथा-पत्रा का भी स्मरण किया। फिर राम का नाम लेकर खूब जोर से सिर ऊपर करने की कोशिश की। ईश्वर की कृपा! उस घैले का कनखा फूट गया और कनखा सहित मेरा सिर ऊपर चला आया। तब तक लड़कों और कुत्तों का कोलाहल भी अत्यन्त निकट आ पहुँचा था। मैं उस कनखे को गरदन में लटकाये उछलते-कूदते भाग चला। जब तक कुत्ते उस घैले के निकट पहुँचे भी न होंगे, तब तक मैं अपनी सॉंध में दाखिल हो गया।

खैर, किसी कदर मैं बच तो आया किन्तु वह घैले का कनखा अभी तक मेरी गरदन में लटक रहा था। जब दूसरे दिन मैं बाहर निकला तो मेरे गाँव के सभी जाति-भाई पूछने लगे कि पाँडेजी आपकी गरदन में यह क्या है?

लड़क तो और भी पाजी होते हैं। वे और भी पूछ पूछ कर दिक करने लगे। मैं भी ठहरा एक नम्बर का काइयाँ। तमक कर कहा—

जो मन देकर पढ़ता है।
तगमा उसको मिलता है॥

सो, भाई देखो कल मैं उस गाँव की आर टहलने गया था। वहाँ पडितो की एक बड़ी सभा बैठी थी। जब मैं वहाँ पहुँचा तो पडितों ने मुझे बहुत सम्मान के साथ निमत्रण दिया और मुझे उस सभा मे बुला कर लेगये। वहाँ मेरी विद्या को देख कर वे लोग खुश होगय और चलते समय मुझे यह तगमा दिया। चूँकि यह तगमा कुछ जलदी मे तैयार किया गया था इसीलिये इसकी चारो ओर कुछ उभड़-खाबड़ रह गया है। उन लोगों ने कहा— 'पाँड़ेजी आपकी विद्या देख कर हम लाग बहुत खुश हुए। पहले से आपके आने को कुछ खबर न थी, इसीलिये तगमा नहीं तैयार

किया गया था। अब जलदी में जैसा कुछ भला-बुरा बन सका है उसे आप धारण कीजिये। जो कुछ इसमें ऐब रह गया है वह जब आप एक दिन आइयेगा तो दुरुस्त कर दिया जायगा। अब आपही लोग कहिये मैं उनके आग्रह को कैसे टालता।'

सभी मेरी बातों मे आगये। मेरी विद्या-बुद्धि की लोगों में धाक सी बँध गई। सभी कहते—देखो भाई, पाँडे ने बड़ा नाम किया। देखो उसे पंडितों ने भी तगमा दिया है। क्या तगमा पाना आसान काम है और क्या सभी पा सकते हैं? पाँडे ने कमाल किया। उस दिन से जब मैं घरसे निकलता सभी मुझे तगमा पाँडे तगमा पाँड़े पुकारते। यों कुछ ही दिनों मे लड़के, जवान, बूढे सभी मुझे तगमा पाँडे कहने लगे। देखो लड़के! इसीको धूर्त्तता कहते हैं। हार को जीत बना लेना यही कह-लाता है, समझे?

शायद तुमको मालूम नहीं कि मैं चश्मा पहनता हूँ। तुम कहोगे—'पाँडेजी आपको चश्मा कहाँ से आया।' सुनो बच्चो! उसकी भी एक कहानी है। ✓

बात यों है, कि जब उस दिन वह बाघ भागा और उसकी पूँछ से बँधा हुआ बन्दर घसीटाते घसीटाते मर गया, तब मैंने सोचा कि जगल में रहकर बाघ से बैर कितने दिनों तक निबहेगा। इसलिये मैंने उससे दोस्ती करने की सोची। एक दिन उसके घर गया। अपने घर के बाहर ही बाघ बाघिन दोनों प्राणी बैठे थे। मुझे देखते ही वह डरके मारे अपने घरमें घुस गया और किवाड लगा दी। मैं समझ गया, कि बाघ के दिल से अभी डर नहीं गया है। खैर, मैं उसके दरवाजे के निकट पहुँचा और किवाड़ी खटखटाते हुए कहा—'मामाजी, मामाजी, आप घरमें क्यों घुस गये? वाह, क्या भगिने को देखते ही दहेज देने के डरसे यों लुका जाना

उचित है ? आइये बाहर—दो चार गपसप हो। देखिये, वह दुष्ट बन्दर हम दोनों मामा-भगिने को आपस में लड़ाना चाहता था। कहिये, किस चालाकी से मैंने उसे मरवा डाला। न आपका एक बाल बाँका हुआ न मेरा और वह दुष्ट भी मारा गया। आप आइये, कुछ पान-कसैली खिलाइये। मामी को भी बुलाते आइये।' मेरी बात सुन कर मामा-मामी में कुछ कानाफूसी हुई। फिर किवाड़ खुली। देखता क्या हूँ कि आगे आगे मामी अपने हाथ में एक हरिन के कलेजे का माँस लिये हुए आ रही हैं और पीछे पीछे मामा धीरे धीरे पैर उठाते चले आते हैं। [बाघ मामा को अभी तक मेरा डर लगा हुआ था। मामी ने वह मास का टुकड़ा मेरे आगे रख कर कहा-'लो भगिना, कुछ जलखावा करो।' मामा-मामी को सप्रेम प्रणाम कर मैंने जलपान किया। फिर इधर-उधर की बातें कर घर लौटा।

अब मैं बाघ के घर प्रतिदिन जाने आने लगा। वहाँ मेरी खातिरदारी रोज होती। मैं कुछ अपने खाता था, कुछ बालबच्चों के लिये भी ले आता था। मेरे दिन बड़ी मौज म कटने लगे। एक दिन जब मैं मामा के घरमें गया तो देखता क्या हूँ कि कई चश्मे इधर-उधर पड़े हुएहैं। मामाजी,तो आदमियों पर भी हाथ साफ करने वाले थे। सो कितने चश्माधारी जेंटिल-मैन भी उनके हाथ पड़ ही जाते थे। ये चश्मे उन्हीं मृत पुरुषों के थे। किन्तु मामा कभी मनुष्य के समाज मे तो रहते नहीं थे, वे चश्मे का प्रयोग क्या जानने गये ? एक दिन उनको मालूम हुआ कि हो न हो यह भी खाने की कोई चीज है। बस दाँतों तले रख कर लगे कड़कड़ाने। चश्मा तो टूक टूक होगया किन्तु मामा की जीभ और मसूड़े भी बुरी तरह घायल हुए। उनसे खूब लहू टपके। इसलिये मामा उन्हें उस दिन से छूते तक न थे। मैंने जब

उन चश्मों को देखा तो तबीयत हुई कि इनमें से एक अगर मिल जाय तो आँखों मे लगाऊँ। मैं मनुष्य-समाज से पूरा परिचित ठहरा—मैं चश्मे का व्यवहार क्यों न जानूँ? मेरे गले मे तगमा था ही, अब कुछ कसर थी तो एक चश्मे की। फिर पूरा पडित बनने में मुझे क्या देर!

अतएव, एक दिन जब मैं मामा के यहाँ गया तो उन चश्मो में से एक सुनहली कमानी-वाला उठाया। मुझे चश्मा उठाते देख कर मामी चिल्ला उठी—'अरे भगिना! देखो उसे मुँह में मत रखो, नहीं तो जीभ कट जायगी।' मैंने कहा 'नहीं मामी, तुम घबड़ाओ मत। मैं इसे देखता ही भर हूँ।' उस समय अच्छी तरह देख-भाल कर रख दिया। जब चलने का अवसर हुआ तो उसे चुरा कर चम्पत हुआ। यद्यपि माँगने से भी मिल सकता था, किन्तु स्वभाव वश चोरी ही कर ली। खैर, किसी कदर हाथ तो लगा।

अब मैं रोज चश्मा पहनने लगा। पहले तो केवल शौक से पहना था, किन्तु अब तो धीरे धीरे आँख खराब होने लगी और बिना चश्मा पहने सूझना ही नहीं था। अब मेरे लिये चश्मा पहनना आवश्यक होगया ; देखो लड़की ! तुम कभी शौक से चश्मा न पहनो।

एक रात मैं अपनी जजमनिका मे निकला। धोखे से मेरा चश्मा घर पर ही छूट गया। बिना चश्मे के मैं अन्धा सा हो रहा था। राह भूल गई। भकटते भटकते गाँव मे चला गया। वहाँ मै अकस्मात् एक आदमी के घर में घुस गया। मैं अपनी आँखो की कसम खा सकता हूँ कि मैं किसी बुरी नियत से इस घर में नहीं पैठा था। किन्तु अहीर बुझावे सो मर्द। वह घर अहीर, का था। घर में जाते ही उसकी हाँड़ी ढनढनाने लगी। यहाँ फिर भी मैं एक बार शपथ खाने को तैयार हूँ कि मैंने जान-बूझ कर उसकी हाँड़ी नहीं छुई। मैं पाँडे, भला

अहीर की हाँडी की कोई चीज मैं कैसे खाता? जान बूझ कर मैं किस प्रकार अजात बनता? हाँडी की ढनढनाहट सुनते ही अहीर अपना खानदानी लट्ठ लेकर दरवाजे पर आधमका। घर में दीया जल रहा था। मुझे देखते ही झट दरवाजा बन्द कर दिया। मैंने समझा कि बस पिताजी की मौत ही मुझे भी मरना होगा। इधर-उधर देखा। वह घर टट्टी का था। एक ओर टट्टी में थोड़ासा छेद था। मैंने उस छेद को अपनी मुक्ति का मार्ग समझ कर कोशिश करनी शुरू की। उस छेद में अपना मुँह घुसेड़ कर बाहर निकलने की चेष्टा करने लगा। मेरा सौभाग्य। दो चार बार जोर करते ही समूचा शरीर घर से बाहर हो गया किन्तु पूँछ उसी ओर थी। मालूम हुआ पीछे से कोई पूँछ पकड़े हुए है। एक बार हिम्मत लगाकर आगे जोर किया। किन्तु यह क्या? बेईमान अहीर ने छुरी से कच् दे मेरी

पूँछ काट ही ली। अपनी पूछ का सफाया देख कर जैसी आन्तरिक पीडा मुझे हुई, वह अवर्णनीय है। किन्तु उस समय तो जान पर ही आफत आ गई थी। 'अर्द्ध तजहि बुध सर्वस जाता।' मैं अपनी पूछ की माया–ममता छोड़ कर बेतहाशा भाग चला। आगे आगे मैं दौडता, पीछे पीछे लहू का फव्वारा छूटता जाता।

सकुशल घर पहुँच जाने पर मेरे मन में बहुत कष्ट होने लगा। मै सोचने लगा कि पूछ तो कट गई। जब भोर ही में उठूँगा तो लोग क्या कहेगे ? भलेही बड-बूढों को समझा दूँ, किन्तु बदमाश बच्चे तो मानेंगे नहीं। वे कल ही स "पूँछकट्टा" "पूछकट्टा" कह कर चिढान लगेंगे। अतएव, ज्यों ही भोर हुआ कि मैंन नदी के किनारे के उस बबूल के पेड में नीचे लिखा विज्ञापन लटका दिया—

"अवसि देखिये देखन जोगू।"

"सभी सियारों को सूचित किया जाता है कि आज रात में आठ बजे, पन्द्रह मिनट, पैतालिस सेकेण्ड पर सभी सियारों की एक विशाल महासभा उस मुर्दघटिये के ऊँचे टीले पर होगी। सियार जाति की उन्नति कैसे हो, इस विषय पर विशद विचार होगा। सभी सियार भाइयों से प्रार्थना है कि उक्त अवसर पर पधारने को कृपा करें।

—श्री तगमा पाँडे।

निश्चित समय पर सभी सियार इकट्ठे हुए। मैंने सभापति की हैसियत से व्याख्यान दिया—

प्यारे सियार भाइयो! आज आप लोगों को इस स्थान पर इकट्ठ देख कर मैं फूला नहीं समाता। हमारी जाति एकता की बहुत पक्षपाती है। जब हममें से एक भी बोलता है तो सभी उसके साथ बोलते हैं। यह एकता का शुभ लक्षण है। एक के रोने से सभी रोते

पूँछ कटे सियार पाँड़े सभा कर रहे हैं।

हैं—एक के हँसने से सभी हँसते हैं। चाहिये भी यही। किन्तु ऐसी एकता होने पर भी हम लोग नीच क्यों समझे जाते हैं, इसी विषय पर विचार करना है।

आप लोग मनुष्य को जानते होंगे। वह छोटासा जीव होकर भी हाथी, घोड़ा, ऊँट, बाघ, सिंह सभी पर शासन करता है। क्यों? बुद्धि के बल से। हम लोगों में भी तो बहुत बुद्धि है। हमारी बुद्धिमानी और चतुरता के सामने मनुष्य भी सिर झुकाता है। तभी तो वह हमें 'पाँड़ेजी' कहता है। जैसे कान, आँख, मुँह आदि उसको हैं, वैसे हमारे भी। उसको भी दो हाथ, दो पैर हैं, हमें भी दो हाथ और दो पैर हैं। बचपन मे वह भी हमारे ही ऐसा चार पैरों पर चलता है—उस समय अपने दो हाथों से भी वह पैर ही का काम लेता है। किन्तु जब बड़ा होता है, तो हाथ से हाथ का काम लेता है औरपैर से चलता है। हम लोग भी

चाहें तो ऐसा कर सकते हैं। यों सभी बातों में समानता है, यदि भेद है तो सिर्फ पूँछ में। उनमें पूछ है—उसे नहीं। इसी एक पूंछ के कारण ही हम उससे नीच समझे जाते हैं। शायद आप लोगों को मालूम नहीं कि मनुष्य को भी पहले पूछ थी और वह भी चार पैरों पर चलता था। किन्तु उसने एक सभा की और सब आदमियों ने मिलकर अपनी अपनी पूछ काट डाली और उसी दिन से दो पैर से चलने लगे। मैं भी चाहता हूँ कि आज आप लोग आइये, अपनी अपनी पूँछ यहीं काट डाली जाय।

देखिये, पूछ रहने से बड़ी हानि भी है। यह फजूल हमारे पीछे पड़ी रहती है। जब कभी हमारे दुश्मनों से मुकाबला करने का अवसर आता है, यह हमें खूब धोखा देती है। आपने देखा होगा कि जब कुत्ता हम लोगों के पीछे पड़ता है तो उसका पहला वार इसी

पूँछ पर होता है। जब तक हम लोग अपना शरीर अपनी मांध मे ढुकावें ढुकावें तब तक वह दुष्ट, पूछ पकड़ लेता है। तब जो इस पूछ के कारण हमारी दुर्गति होती है, उसे आप जानते ही हैं। मनुष्यों की बुरी नजर भी इसी पूछ पर गडी रहती है। इसलिये मेरी राय है कि इस ससुरी पूछ को काट डालिये। देखिये कल उस गाँव मे फिर पडितों की सभा हुई थी। मुझे भी न्यौता मिला था। जब मै वहाँ गया तो पडितों ने कहा कि 'पाँडेजी, आप लोग हमलोगों से कम किस बात में हैं? कुछ भेद है तो इसी पूछ का। पूँछ काट डालिये और मनुष्यों में मिल जाइये।' मैंने देखा उनकी बात साढ़े सोलह आने ठीक है। देखिये, मैंने फौरन उनके यहाँ ही पूछ कटा डाली। अब में मनुष्य बन गया हूँ। आइये, आप भी पूछ कटा कर मनुष्य बन जाइये।"

मेरी इस लम्बी वक्तृता को सुनकर सभी

सियार बड़े ही खुश हुए। वे खुशी के मारे अपनी पूछ चट-पट करके पृथ्वी में पीटने लगे। बच्चो! तुम लोग सभा मे ताली बजाते हो! हमारा हाथ तो यही पूछ है। फिर हम उसे क्यो न पीटें!

खैर, मेरी बात सभी को मजूर हो गई। सभी सियार कहने लगे कि 'तगमा पाँडे ने जो कुछ कहा है वह बहुत ठीक है। हमें अपनी पूछ अवश्य काट डालनी चाहिये। यह फजूल है।' इस प्रकार बातचीत चल ही रही थी कि एक बूढा सियार खडा हुआ और आँखें मटका मटका कर कहने लगा—

"भाइयो! तगमा पाँडे ने जो कुछ कहा है वह सही और दुरुस्त है। किन्तु हमें एक बात पूछनी है। क्या मनुष्यो को अपनी पूछ कटा डालने का शोक नहीं है? क्या वे पुन पूछ लगाने की कोशिश नहीं कर रहे हैं? देखिये उनमे से कितने अपने नामके आगे-पीछे लम्बी

लम्बी पूछ जोड़ रहे हैं। नाम ही में नहीं, शरीर में भी वह पूछ लटकाने की कोशिश कर रहे हैं। कोई सिर के पीछे शिखा के रूप में पूछ लटका रहा है तो कोई सिर के आगे दाढ़ी के रूप में। कुछ नवयुवक तो अपने कपाल पर भी लम्बी लम्बी पूछ रख रहे हैं। कपड़े-लत्ते में भी पूछ लगा रखी है। कोई गरदन में नेकटाई लटकाते हैं तो कोई गुलूबन्द। कितने की धोती के पल्लुए की एक खूँट सदा पीछे लटकती हुई पूछ सी झूलती रहती है। अब आप ही बताइये कि जब मनुष्य भी अपनी खोई हुई पूछ के लिये ऐसी कोशिश कर रहे हैं तो हमें अपनी लगी हुई पूछ काट डालना, कहाँ तक उचित है। इसके अतिरिक्त एक बात और भी मेरे मन में उठ रही है। निस्सन्देह तगमा पाँडे किसी दुष्ट के पाले पड़ कर अपनी पूछ गवाँ बैठे हैं। जब तक उनकी पूछ कायम थी, तब तक तो उन्होंने इस बात

की जिक्र भी न की थी। अब, जब अपनी पूछ गायब हो गई है तो हम लोगों को भी पुट-पट्टी देकर पूछ कटवाने पर लगे हुए हैं। जो अन्धा होता है वह चाहता है कि ससार ही अन्धा हो जाय—यही हालत तगमा पाँडे की है।

बूढे की बात सभी के हृदय मे बैठ गई। सभी जोर जोर से पूछ पटकने और कहने लगे कि 'बूढे बाबा का कहना ठीक है—पाँडे धूर्त है, बेईमान है।' कोई कोई नवयुवक तो इतने उत्तेजित हुए कि कहने लगे 'मारो, पीटो, इसे धूर्त्तता का मजा चखाओ।' यों चारो ओर महान् कोलाहल मच गया। मैंने देखा, यहाँ ठहरने पर कुशल नहीं। जब तक वे शोर-गुल में फँसे थे, मैं खिसक गया।

विपत्ति अकेले नहीं आती। मैं कितने को कितनी बार छका चुका था। ऐसा शायद ही कोई जीव हो, जिसका कुछ न कुछ अनिष्ट मैंने न किया हो। मैंने जो तुमसे अपनी दो

एक कहानियाँ कही हैं, वह तो मुख्य हैं। इनके अतिरिक्त ऐसी कितनी घटनायें हैं जिन्हें कहने के लिये न तो मुझे समय है और न सुनने के लिये तुम्हें ही। सो, सभी जीव मुझसे असन्तुष्ट थे। अतएव वे सब मिल कर एक दिन जंगल के राजा सिंह के पास गये और मुझ पर नालिश ठोंक दी।

उन लोगों ने राजा से कहा—'महाराज! सियार पाँडे बड़ा उपद्रव कर रहा है। रक्षा कीजिये! रक्षा कीजिये!! पाँडे के अत्याचार से हम लोगों का रहना कठिन है। वह कभी इसे खाता है, कभी उसे खाता है। कभी इसके बच्चे को चट कर जाता है कभी उसके बच्चे को चट कर जाता है। कभी उससे चुगली खाकर इससे लड़ा देता है, कभी इससे चुगली खाकर उससे भिड़ा देता है। महाराज! उसकी शोखी का भी कोई ठिकाना नहीं। जब उससे आप की दुहाई दी जाती है तो कहता है—'चलो

चलो, मैं महाराज फहाराज को कुछ नहीं समझता। पाँड़े के आगे महाराज की क्या चलेगी, वे।'

अपनी शिकायत की बात सुनकर सिंह क्रोध से तलमला उठा। उसने अपने चपरासी भालु को हुक्म दिया कि जाओ पाँडे को फौरन पकड़ कर कचहरी में दाखिल करो। भालु मेरे द्वार पर आते ही चिल्ला उठा—'तगमा पाँडे! घर से निकलो। •राजा साहब तुम्हें बुला रहे हैं। आज तुम्हारी सारी शैतानी निकल जायगी।' मैं समझ गया कि दाल में कुछ काला अवश्य है। कहा—'चपरासी जी! आइये बैठिये। हुक्का तमाखू पीजिये। कहिये क्या बात है? राजाने आज मुझपर क्यों कृपा की है? हाँ चपरासीजी! आपने भोजन तो नहीं किया होगा। आपके लिये बढिया मधु का छत्ता रखे हुआ हूँ।' मधु के छत्ते का नाम सुनते ही भालु के मुँह से लार टपकने लगी।

उसने सारी बातें मुझसे विस्तार पूर्वक कहकर अन्त मे मधु का छत्ता माँगा। निकट ही की सोंध की ओर मैंने इशारा किया। उसमे बिढनी का एक छत्ता था। हड़बड़ी मे भालु सोंध में ढुक गया और उस बिढ़नी के छत्ते को ही मधु का छत्ता समझकर उसपर कौर चलाया। उसका कौर चलाना था कि बिढ़नियाँ उस पर टूट पड़ीं। अब वह उस सोंध मे से चिल्लाने लगा। सोंध कुछ तँग थी, घुसने को तो हुजूर घुस गये थे, किन्तु निकलना मुश्किल था। मैं खूब हँसने लगा। आखिर जब उसकी बुरी गत देखी तो पीछे से उसकी पूछ पकड कर बडी कठिनाई से बाहर घसीट लाया। बाहर निकल कर जब तक वह क्रोध से मुझ पर कोई चोट करे, तब तक मैं अपनी सोंध मे घुस गया। बिढनी की डक से अपने मुँह और देह को फुलाये वह क्रोध मे दाँत पीसता हुआ चला गया।

महाराजा सिंह के पास जाकर उसने कहा—'महाराज ! सचमुच पाँड़े आपका हुक्म नहीं मानता। वह तो कहता है, राजा दूसरा कौन है, राजा तो मैं हूँ। देखिये महाराज, जब मैंने उसे चलने को कहा तो उसने एक बिढनी के छत्ते को मेरी देह पर फेंक दिया और कहा जाओ, अपने राजा से फरियाद करो।' सुनते ही सिंह का क्रोध और बढ गया। उसने अपने मँत्री हुँराड़ से कहा—'क्यों मत्रीजी ! क्या उपाय होना चाहिये'। मँत्रीने कहा—'महाराज ! वह बल से वश में नहीं होगा, छल से होगा। बिल्ली को भेजता हूँ वही उसे ठग कर बुला लायेगी।' बिल्ली मेरे दरवाजे पर आकर कहने लगी—'अरे बहिन-पूत ! अरे बहिन-पूत ! जरा बाहर आरे ! देखो मैं तुम्हारी मौसी यहाँ खडी हूँ।' मैंने बाहर निकल कर मौसी को प्रणाम किया। कहा—'मौसी किधर चली हो।' मौसी बोली 'बहिनपूत, मैं साधु हो गई हूँ—वृन्दावन जा

रही हूँ। किन्तु जाने के पहले एक बार राजा का दर्शन कर लेना चाहती हूँ—राजा तो ईश्वर का अवतार न ठहरा। अकेले राजा के दरबार में जाते डर लगता है, तू साथ साथ चल, बहिनपूत। तुझे छोड़ कर और कौन मेरा साथी होगा?' मैं तो सब समझ रहा था। कहा—'मौसी। तुम्हारी बात ठीक है—मैं चलूँगा। किन्तु चलने के पहले तुम जरा कुछ जलपान तो करलो। देखो मौसी, उस गोलाघर में बहुत से चूहे हैं, तुम उनमें से दो-एक के साथ पानी पीलो, तब तक मैं भी कुछ खा लेता हूँ।' मौसी ज्यों ही गोलाघर में गई कि वहाँ उछलते हुए चूहों को देखकर उछल पडी। संयोग की बात! चूहे तो मौसी को देखते ही रफूचक्कर होगये। खुद मौसी चूहेदानी पर गिर पडी। मौसी के पैर पडते ही उसकी कल दब गई और मौसी का एक पैर कट गया। मौसी छटपटाती हुई भागी। सिंह

से जाकर उसने भी मेरी खूब ही शिकायत करदी। तब सिंह की आज्ञा से उसके सेनापति बाघ अपनी सेना सहित मेरे द्वार पर आ धमके। बाघ को आते देखकर मैं आगे बढा और झुक कर कहा—'प्रणाम मामा जी।' मामा ने कहा—'छोड़ो यह मामा भगिने का नाता। राजा की बुलाहट है, जल्दी चलो।' मैंने कहा—'वाह! जाऊँगा क्यों नहीं? राजा के दर्शन क्या कम भाग्य से होते हैं। किन्तु मामाजी, इस कडी धूप में आने के कारण तुम कुछ सूखे से मालूम पडते हो। मेरी राय है कि तुम जरा सुस्ता लो, कुछ जल जलपान करलो। फिर हम दोनों मामा-भगिना चलेंगे। देखो मामा, तुम्हारे लिये मैंने एक बकरा कठमे बाँध रखा है।" एक शिकारी कल एक बकरा एक कठघरे के अन्दर, बाघ को फँसाने के लिये, बाँध गया था। मैंने उसे देखाते हुए कहा देखो मामा, यह कैसा तेलगर बकरा है?

ओफ! उसमें कैसा मजा होगा।' बकरे को देखते ही बाघ उछलता हुआ उस ओर चला। किन्तु ज्यों ही उस कठघरे के अन्दर पैर दिया कि फाटक बन्द! बाघ घबड़ाया। उछला कूदा, गरजा-बरसा, किन्तु कोई फल नहीं। सेनापति को कैद होते देख सारी सेना भागी।

अब बाघ की गिरफ्तारी की बात सुन कर खुद सिंह मेरे दमन के लिये चला। ज्यों ही मैंने उसे आते देखा अपनी स्त्री और पुत्र सहित आगे बढ़कर प्रणाम किया। मेरी इस नम्रता को देखकर सिंह बहुत सन्तुष्ट हुआ। उसने मुझसे पूछा—'क्यों पाँडे, मेरे निकट तो तुम ऐसी नम्रता दिखाते हो और मेरे कर्मचारियों को फटकार बताते हो, उन्हें कैद करते हो। यह कैसी बात है? बोलो, इसकी सजा क्या होनी चाहिये।' मैंने कहा—'महाराज! मैं श्रीमान् की प्रजा ठहरा। श्रीमान जो कुछ दंड दें, वह मुझे स्वीकार है। किन्तु क्या मैं श्रीमान्

मे पूछ सकता हूँ कि मैंने कौनसा अपराध किया है ? महाराज ! मैं जानता हूँ कि श्रीमान मुझसे क्यों रज हैं ! किन्तु जरा मेरे अपराधों पर न्यायपूर्वक विचार कीजिये , आपके चपरासी भालु,या दूती बिल्ली अथवा सेनापति बाघ, ये जो आये तो आते ही इन लोगोंने मुझसे खाना माँगना प्रारम्भ किया। महाराज ! तुलसी-ताम्बा हाथ में लेकर शपथ खा सकता हूँ कि इन्होंने मुझे कभी भी यह न कहा कि तुम्हें राजा बुलाते हैं। खैर, भूखके मारे आपके चपरासी जी उस सोंध में घुसे, वहाँ वे बिढनी के छत्ते को मधु का छत्ता समझ कर लपके । फल हुआ सो आप जानते ही हैं। देखिये, उस सोंध में भालु के पैर के चिन्ह हैं कि नहीं। और, यह बिल्ली आई तो मुझे बुलाने और चलगई चूहे पकड़ने उस गोलाघर में । वहाँ चूहेदानी से पैर कटा आई और श्रीमान् के आगे मेरी शिकायत कर दी । यह आपके सेनापति

बाघ उस बकरे के लोभ में उस कठघरे में जा फँसे हैं। देखिये, महाराज, वह बकरा बँधा है कि नहीं और आपके सेनापति कैद हैं कि नहीं? अब बताइये, मेरा अपराध इसमें क्या है?'

सिंह मेरा कथन सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ। कहा—'पांडे! तुम सचमुच निरपराध हो। ये मेरे अमले ही सब खराब हैं।' फिर उसने कहा—'और ये सब जंगल के जानवर तुमपर क्यों नालिश करते हैं।' मैंने कहा—'महाराज! उसकी बात भी साफ साफ मुझसे सुन लीजिये। इन लोगों ने एक सभा की थी जिसमें इन लोगों ने यह विचार किया था कि श्रीमान् को राजगद्दी से हटा के दूसरे किसीको राजा बनावें। महाराज! मैंने उस सभा में इस बात का विरोध किया, कि नहीं—महाराजा सिंह ऐसा दूसरा न्यायी, उदार, धर्मात्मा और बलिष्ठ राजा हो नहीं सकता। मेरी बात सुन कर वे लोग बड़

असन्तुष्ट हुए और उसी दिन से कहने लगे कि इसका बदला चुकावेंगे। सो आज महाराज के निकट इन्होंने बदला चुकाने की नीयत से नालिश कर दी है। महाराज! दया करें, उस सभा के सभापति श्रीमान् के मंत्री यही हुँड़ाड़ जी बने हुए थे।

सभा की बात सुनते ही सिंह आपे से बाहर हो गया। मंत्री हुँड़ाड उसी जगह खड़ा था। सिंह ने उसे ऐसे जोर से तौल के थप्पड़ मारा कि बेचारा वहीं सदा के लिये लोट गया। हुँड़ाड़ को मरते देख कर सभी जंगली जीव इधर-उधर भाग चले। सिंह ने दौड़ दौड़ कर उनमें से भी कई को वहीं सुला दिया। पीछे आकर मेरी पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा—'पाँड़े जी! तुम धन्य हो। सचमुच तुम तगमा पाँडे कहलाने के योग्य हो। मैं तुमसे प्रसन्न हुआ। आज से तुम्हीं मेरे मंत्री हुए—लो यह मंत्री का मुकुट!' ऐसा कहकर

सिंह का दर्बार—पाँड़े जी मन्त्री बने ।

महाराज सिंह ने स्वयं अपने हाथों से मृतमंत्री हुँराड़ का मुकुट मेरे सिर पर रख दिया। मैं उसी दिन से अभी तक उस जंगल के राज्य का मंत्री हूँ—समझे बच्चो!

बस, अब अधिक नहीं। यद्यपि मेरी जीवन कहानी का अन्त नहीं, तथापि अब मैं यहाँ ही समाप्त करता हूँ। देखो! साँझ हो गई। उस जंगल से मेरे जाति-भाई हुआँ हुआँ करके मुझे बुला रहे हैं। तुम्हारी माँ भी तुम्हें खिलाने के लिये खोज रही होगी। इसके अतिरिक्त, वह देखो, मेरे जाति-भाई की आवाज सुनते ही हमारा पुराना शत्रु वह कुत्ता इस ओर छुटा हुआ चला आ रहा है। अतः अब देर नहीं। लो मैं चला—

हुआँ हुआँ हुआँ हुआँ।
किस्सा मेरा खतम हुआ॥
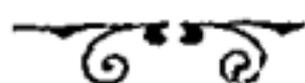
इसके बाद ?

"तोता-मैना" पढ़ो ।

महिला-मनोरंजन-माला
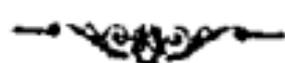
सम्पादिका-श्रीमती चन्द्रमणि देवी।

यह अब सर्व स्वीकृत सिद्धान्त हो गया है कि बिना स्त्रियों को शिक्षित किये समाज अथवा देश की उन्नति हो नहीं सकती। किन्तु स्त्रियों को शिक्षा में इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि वे पश्चिमी शिक्षा की चकाचौंध में पडकर अपना प्राचीन आदर्श न खो बैठें। हमने निम्नलिखित पुस्तकें इसी सिद्धान्त को सामने रख कर एक विदुषी महिला द्वारा तैयार कराई हैं। आप अपनी बेटी, बहिन, अर्द्धांगिनी एवं माता को इन पुस्तकों का उपहार देने से न चूकें।

१ बेटी	।)	२ बहिन	।)
३ दुलहिन	।)	४ माता	।)

शेष पुस्तकें तैयार हो रही हैं।

पुस्तक भण्डार, लहेरियासराय।

चारु चरित-माला
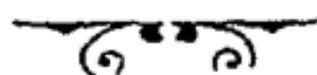
बालकों के चरित-निर्माण में महापुरुषों की जीवनियों से बड़ी सहायता मिलती है—यह बात निर्विवाद सिद्ध है। इसी आदर्श को सामने रखकर हमने इस चारु चरित-माला के संकलन का भार उठाया है। आशा है बाल-हितैषी सज्जन इस माला को अपनाकर हमारा उत्साह बढ़ायेंगे। इन पुस्तकों की छपाई-बँधाई भी खूब ही नेत्ररंजक रखी गई है। प्रत्येक पुस्तक के टाइटिल (मुख-पृष्ठ) पर उस महापुरुष का भव्य चित्र है, जिसका चरित पुस्तक में लिखा गया है। इतना होने पर भी प्रत्येक पुस्तक का मूल्य केवल चार आना रखा गया है।

इस माला की पुस्तकें—

१ शिवाजी	।)	४ गुरु गोविन्द सिंह	।)
२. भगत सिंह	।)	५. शेर शाह	।)
३. राणा जगबहादुर	।)	६. गोखले	।)

और पुस्तकें भी लिखी जा रही हैं।

पुस्तक-भण्डार, लहेरियासराय।

बालक

हिन्दी में बालकों के लिए अद्वितीय सचित्र मासिक पत्र

सम्पादक—प० रामवृक्षशर्मा बेनीपुरी

वार्षिक मूल्य ३) नमूना ।)

प्रतिमास ४८ पृष्ठ और ३० ३२ चित्र

आज तक हिन्दी में जितने बालोपयोगी पत्र निकल चुके हैं या निकलते हैं, उनसे इसमें अनेक विशेषताएँ हैं। बँगला, मराठी, गुजराती, अंग्रेजी आदि उन्नत भाषाओं के बालोपयोगी पत्रों के सामने रखने योग्य अभी तक इसके सिवा कोइ पत्र राष्ट्र भाषा हिन्दी में नहीं निकला। इसके अन्दर बालकों की ज्ञानवृद्धि और मनोरंजन के सभी प्रकार के साधन उपस्थित हैं। इसमें १६ स्थायी सचित्र शीर्षक हैं, जिनमें विविध शिक्षाप्रद सामयिक विषयों के समावेश किया गया है, जिनसे प्रति मास बालकों को भिन्न-भिन्न भाँति की लाभदायक बातें मालूम हो जाती हैं। छपाई, सफाई, शुद्धता और सुन्दरता तथा भाषा की सरलता और विषयों के चुनाव पर इतना काफी ध्यान दिया जाता है कि इसका नियमित रूप से पढ़ने वाला बालक थोड़े दिनों में विविध उपयोगी ज्ञानों का भण्डार बन जायगा। 'विज्ञान' 'बहादुरी की बातें' केसर की क्यारी' 'जीवजन्तु' 'इतिहास' 'अनोखी दुनिया' 'वह कौन है'? 'बुढ़िया की कहानी' 'पँचमेल मिठाई' 'पूछताछ' 'भला चंगा' 'हँसी खुसी' 'कहाँ और क्या' बालक की बैठक' 'बालचर' और 'सम्पादक की झोली'—इन १६ स्थायी शीर्षकों में से पहले में नवीन

युग के चमत्कारपूर्ण आविष्कारों की चर्चा, दूसरे में वीर पुरुषों की अलौकिक करामातें, तीसरे में संसार के महापुरुषों के चुने हुए उपदेश-पूर्ण वाक्य, चौथे में संसार के नाना प्रकार के जीवों का परिचय, पाँचवें में इतिहास की महत्त्वपूर्ण कथायें, छठें में संसार के अद्भुत समाचारों का संग्रह, सातवें में महापुरुषों की जीवनियाँ, आठवें में दिलचस्प कहानियाँ, नवें में पाँच उन्नत भाषाओं के प्रसिद्ध पत्रों से चुने हुए बालोपयोगी विषयों का सकलन, दसवें में बालकों के चित्त में कौतूहल उत्पन्न करने वाले मनोरंजक प्रश्नों के उत्तर, ग्यारहवें में स्वास्थ्य सम्बन्धी जानने योग्य लाभदायक बातें तथा देशी और विदेशी पहलवानों की अनेक चित्रों से सुसज्जित जीवनियाँ, बारहवें में शुद्ध विनोदपूर्ण रसीले चुटकुले, तेरहवें में देश-देशान्तर का भौगोलिक वर्णन, चौदहवें में मनोहर बुझौवल और पहेलियाँ, पन्द्रहवें में सेवासमिति और स्काउटिंग सम्बन्धी बुद्धिवर्द्धक लेख, तथा सोलहवें में बालकों को सम्पादक की ओर से दी गई अमूल्य शिक्षायें रहती हैं। उक्त सभी विषयों के समावेश के साथ साथ इस बात का ध्यान रखा जाता है कि ऐसी एक बात भी न हो जिससे बालकों का वास्तविक हित न हो। यही कारण है कि सभी पत्रों और विद्वानों ने मुक्त कंठ से इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है। यदि आप अपने बालकों का सच्चा कल्याण चाहते हैं, उनके जीवन को मंगल और आनन्द से भरपूर बनाना चाहते हैं, तो इस 'बालक' द्वारा उनके ज्ञान का खजाना भरिये।

सुन्दर-साहित्य-माला

१—पद्य-प्रसून

रचयिता—कवि सम्राट् प० अयोध्यासिंह जी उपाध्याय

हिन्दी का सुप्रसिद्ध मासिक पत्र 'चाँद' लिखता है—भिन्न भिन्न विषयों पर लिखी हुई कविताओं का यह सुन्दर संग्रह है। कवितायें सभी रसमयी हैं। शिक्षा के साथ साथ उनसे हृदय को अपूर्व शान्ति और आनन्द भी प्राप्त होता है। उपाध्यायजी की मधुर कविताओं का यह सुन्दर संग्रह हिन्दी-साहित्य का एक देदीप्यमान रत्न है—इसमें सन्देह नहीं।

अखिल-भारतवर्षीय हिन्दी साहित्य-सम्मेलन की मासिक मुख पत्रिका 'सम्मेलन पत्रिका' लिखती है—कविवर उपाध्यायजी के सरस पद्यों का यह एक सुन्दर संग्रह है। हिन्दी संसार को उपाध्यायजी की रचना पर अभिमान है। वह एक युग के कवि हैं। उन्हीं की सुन्दर कविताओं का इसमें संकलन किया गया है। प्रकाशक ने वास्तव में प्रशंसनीय कार्य किया है। हम उन्हें बधाई देते हैं।
पृष्ठ संख्या, लगभग ३००, सचित्र, सजिल्द, मूल्य १॥)

२—दागे जिगर

लेखक—साहित्य भूषण श्रीरामनाथलाल 'सुमन'
भूमिका लेखक—उपन्यास-सम्राट् श्रीयुत प्रेमचन्दजी बी० ए०
प्रेमचन्दजी ने इस पुस्तक की भूमिका में लिखा है—हजरत

जिगर की कविता उस वाटिका के समान है, जो सब प्रकार के फूलों से भरी हुई हो।' 'सुमनजी' की टिप्पणियाँ 'जिगर' के कलाम के साथ सोने में सुगंध हो गई हैं। वह कवि भाग्यवान् है, जिसे कोई चतुर पारखी मिल जाय और इस लिहाज से हजरत जिगर अवश्य भाग्यशाली कवि हैं। आशा है, हिन्दी संसार इस पुस्तक का यथेष्ट आदर करेगा।

कवि की जीवनी के साथ साथ उसकी उत्तमोत्तम रचनाओं की तुलनात्मक आलोचना भी है। अन्त में कठिन फारसी शब्दों के हिन्दी-सरलार्थ भी दिये गये हैं।

पृष्ठ-संख्या लगभग २५०, सजिल्द, मूल्य १।)

३—निर्माल्य

रचयिता—कविरत्न प० मोहनलाल महतो 'वियोगी'

इस पुस्तक में छायाबाद की भावमयी ललित कविताओं का सुसम्पादित संग्रह है। वियोगीजी छायावाद की कविता में कवीन्द्र रवीन्द्र के अनुगामी हैं। आपकी कविता कितनी मधुर और कैसी चमत्कारपूर्ण होती है, यह हिन्दी संसार को भलीभाँति मालूम है। आप माधुरी-पदक प्राप्त कर चुके हैं। इस पुस्तक के विषय में अखिल भारतीय हिन्दी-साहित्य सम्मेलन के भूतपूर्व सभापति सुसमालोचक प० जगन्नाथप्रसाद जी चतुर्वेदी लिखते हैं—निर्माल्य के निरीक्षण से सुरसिकों को सन्तोष हुए बिना न रहेगा। निरवद्य पद्य-रचना-चातुर्य्य और माधुर्य्य के अतिरिक्त सुन्दर सूक्ष्म, कमनीय कल्पना, भव्य भाव, तथा नूतनत्व के निदर्शन का दर्शन स्थान स्थान पर हो जाता है।

पृष्ठ लगभग १५०, रेशमी जिल्द पर सोने के अक्षर। आयल पेपर का आवरण। चमकीला ट्रेडमार्क। सजावट अप-टु डेट। मू० १)

४—महिला-महत्व

लेखक—बाबू शिवपूजन सहाय

इस पुस्तक में ऐतिहासिक, सामाजिक और साहित्यिक दस अनूठी कहानियों का दर्शनीय समूह है। यह एक ललित, प्रसाद पूर्ण, ओजस्वी, मनोरञ्जक और सर्वांगसुन्दर गद्य काव्य है। इसकी चित्ताकर्षक वर्णनशैली, कवित्वमयी भाषा, अनल्प-कल्पनामयी रचना-शैली, अजस्र भाव प्रवाह और मनोमुग्धकर सरसता का रसास्वादन कर आप निश्चय ही अवाक् हो जायँगे। शब्दलालित्य, भाषासौष्ठव, वर्णन-चातुर्य्य, रस गाम्भीर्य, कल्पना कल्लोल और भाव सौकुमार्य्य ऐसा अविरल है कि एक बार पढ़कर आप इस पुस्तक को छाती से लगायें रहेंगे। कभी प्रेम की मस्ती में झूमने लगेंगे, कभी प्राचीन राजपूती वीरता के गर्व से फूल उठेंगे, कभी कोमल कान्त पदावली की प्रफुल्लता पर लट्टू की तरह थिरक उठेंगे। कई बार पढ़ने पर भी सतोष न होगा। गद्य काव्य का सजीव चित्र है। पृष्ठ—३००, अद्वितीय सुन्दर छपाई। सर्वांग सुसज्जित। मूल्य २)

५—कवि-रत्न 'मीर'

लेखक—साहित्य-भूषण श्रीरामनाथलाल 'सुमन'

भूमिका-लेखक—बाबू शिवपूजन सहाय

'दागे जिगर' की तरह उर्दू के महाकवि 'मीर' पर सुमनजी ने यह भी एक अतीव सुन्दर समालोचनात्मक ग्रंथ लिखा है।

न्होंने हिन्दी, उर्दू और संस्कृत के कवियों की कवितायें उद्धृत कर मीर' की रचना की ऐसी गवेषणापूर्ण तुलनात्मक समालोचना लिखी है कि सहृदयता बरबस मुग्ध हो-जाती है। 'दागे जिगर' की तरह इसमें भी कवि की जीवनी और उसकी उत्कृष्ट रचनाओं का सम्पादित संग्रह है। साथ ही, कठिन फारसी-शब्दों के सरलार्थ भी दिये गये हैं। पृष्ठ संख्या लगभग ३५०, सजिल्द, मूल्य १॥)

९—बिहार का साहित्य

इस पुस्तक में बिहार-प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रथम पाँच सभापतियों के भाषणों का सुसम्पादित सुन्दर संग्रह है। साथ ही, स्वागताध्यक्षों के भी भाषण संग्रहीत हैं। सभापतियों के नाम ये हैं—(१) हास्य-रसावतार पं० जगन्नाथप्रसादजी चतुर्वेदी (२) हिन्दी के गद्य-कवि राजा राधिकारमणप्रसादसिंह एम० ए० (३) बिहार के वयोवृद्ध सुलेखक और कवि बाबू शिवनन्दन सहाय (४) प्रोफेसर पं० सकलनारायण शर्मा, काव्य व्याकरण-सांख्यतीर्थ, विद्याभूषण (५) भारतेन्दु के समकालीन वयोवृद्ध साहित्यसेवी पं० चन्द्रशेखरधर मिश्र। इस प्रकार इस एक ही पुस्तक में हास्यरस की सरस धारा, गद्यकाव्य का ललित प्रवाह, साहित्यिक विकास का गवेषणा-पूर्ण विवेचन, हिन्दीव्याकरण की गूढ़ातिगूढ़ बातों का विद्वत्तापूर्ण स्पष्टीकरण और साहित्यिक इतिहास का सूक्ष्म अन्वेषण संवलित है। इसको पढ़ कर आप बिहार के प्राचीन और अर्वाचीन साहित्य का गौरव स्पष्ट देख सकते हैं। ज्ञानवृद्धि के साथ साथ मनोरंजन की भी अपूर्व सामग्री है। पृष्ठ संख्या २००, पक्की

७—देहाती दुनिया

लेखक—बाबू शिवपूजन सहाय

इस उपन्यास में देहाती दृश्यों का ऐसा स्वाभाविक वर्णन है कि आप पढ़कर केवल चकित और पुलकित ही नहीं होंगे, बल्कि हँसते हँसते लोटपोट भी हो जायँगे। सच पूछिये तो इसमें केवल मधुर और शुद्ध विनोद ही नहीं, अनेक उपदेश भी भरे पड़े हैं। भाषा ऐसी सरल, रसीली, रँगीली, लोचदार, फड़कती हुई, सजीव और सुबोध है कि हलवाहे और मजदूर भी खूब धड़ल्ले से पढ़कर बड़ी आसानी से समझ सकते हैं, और खूब मजा भी लूट सकते हैं। वर्णनशैली तो बड़ी ही हृदयग्राहिणी है और सजीव रचनाशैली भी एकदम निराले ढंग की है। बिल्कुल मुहावरेदार भाषा है। रोजमर्रे की बोलचाल की ऐसी सीधी सादी भाषा में ऐसा मनोरंजक और शिक्षाप्रद उपन्यास आज तक हिन्दी में नहीं निकला। मजाल क्या कि एक बार पढ़कर आप अपने दस मित्रों से इसे पढ़ने के लिये साग्रह अनुरोध न करें। हम शर्तिया गारण्टी करते हैं कि यह मौलिक उपन्यास पढ़कर आप अवश्य ही मुग्ध हुए बिना न रहेंगे। विश्वास कीजिए, 'देहाती दुनिया' की सैर करके आप निस्सन्देह अपने को कृतार्थ मानेंगे। पृष्ठ लगभग २००, सुनहले अक्षर से युक्त नये फैशन की रेशमी जिल्द, चमकीला रेशमी बुकमार्क, आयल पेपर का चिकना आवरण, मूल्य १॥)

८—प्रेम-पथ

लेखक—पं० भगवतीप्रसाद वाजपेयी

यह उपन्यास क्या है, प्रेम की माधुरी का अघट खजाना है।

अगर एक बार हाथ में लेकर पढ़ना शुरू कीजिये, तो खाना पीना भूल कर इसे समाप्त किये बिना आप हरगिज़ उठ नहीं सकते। एक एक पृष्ठ पढ कर आप पत्थर की मूरत बन जायँगे। तारीफ यह है कि आप इसे ज्यों ज्यों पढ़ते जायँगे, तीव्र उत्कठा बढती जायगी। इसमें एक सुन्दरी नवयुवती और एक शिक्षित नवयुवक का आदर्श प्रेम ऐसे शुद्ध एव चटकीले रग से चित्रित किया गया है कि कहीं कहीं अनायास मुक्तकण्ठ से धन्य धन्य कह उठना पड़ता है। विशुद्ध प्रेम कितना मधुर और कैसा आनन्ददायक होता है, उसकी चिन्तना और तर्कना में कितनी मधुरता और कैसी बिजली होती है, यह अगर देखना हो तो इसे जरूर पढिये। सब से बड़ी बात यह है कि इसमें पद-पद पर लौकिक शिक्षायें भरी हुई हैं। ऐसा सरस सामाजिक मौलिक उपन्यास अभी तक आप शायद ही पढे होंगे। पृष्ठ ३००, पक्की जिल्द, नये ढग का आवरण, मूल्य २)

९—नवीन वीन

रचयिता—प्रोफेसर लाला भगवानदीन जी

इसमें कविवर दीनजी की चुनी हुई मीठी अनूठी कविताओं का परम रमणीय सग्रह है, जिनमें बीस कवितायें सचित्र हैं। कुशल शब्द शिल्पी की रचना को चित्र शिल्पी की कुशलता ने और भी सजीव बना दिया है। कवितायें इतनी सरल और सरस हैं कि बालक भी उनमें मग्न हो जा सकते हैं। भाव तो ऐसे अनूठे हैं कि पढ कर तबियत फड़क उठती है। उर्दू शैली ने कविता में और भी लोच पैदा कर दी है। कई कविताओं में लालाजी की ओज-

स्विनी लेखनी ने कमाल कर दिया है। अभी तक लालाजी की उत्तमोत्तम कविताओं का ऐसा सर्वाङ्गसुन्दर कोई सग्रह नहीं निकला।

पृष्ठ सख्या लगभग १५०, बीस चित्र, सजिल्द, मूल्य २)

सुबोध-काव्यमाला

१—बिहारी-सतसई

सरल टीका सहित

[केवल छ महीने मे प्रथम सस्करण बिक गया

टीकाकार—प० रामवृक्ष शर्म्मा बेनीपुरी

आज तक बिहारी सतसई पर जितनी छोटी बडी टीकायें निकल चुकी हैं, उनमें सब से सरल, सस्ती और सुबोध यही है। यह नया सस्करण पहले से भी अधिक सुन्दर और परिवर्द्धित तथा परिष्कृत रूप में निकला है। दोहों का पाठ शुद्ध, उनका स्पष्ट अन्वय, सरल भाषा में भावार्थ, कठिन शब्दों के सुगम अर्थ, और नोटों में विशेष जानने योग्य बातों का उल्लेख है, जिससे विद्यार्थियों और कविता-रसिकों के लिए इसकी उपयोगिता बहुत अधिक बढ़ गई है। थोड़ा पढ़ा लिखा आदमी भी बिहारी की रस-भरी रचना का पूरा मजा लूट सकता है। आरभ में बाबू शिवपूजन सहाय-लिखित "सतसई का सौन्दर्य" शीर्षक एक सरस सुरुचिपूर्ण निबन्ध है, जिसमें सतसई की बारीकियाँ झलकाई गई हैं। सुन्दर कपड़े की पक्की जिल्द, पृष्ठ लगभग ४००, मूल्य तो भी १।)

विद्यापति की पदावली

सचित्र और सटिप्पण

टीकाकार—प० रामवृक्ष शर्मा बेनीपुरी

भूमिका-लेखक—साहित्यरत्न पं० अयोध्यासिंह जी उपाध्याय

संस्कृत-साहित्य में जो स्थान जयदेव का है, हिन्दी-साहित्य
वही स्थान विद्यापति का है। दोनों ही ने बड़ी सहृदयता से श्रीराध
कृष्ण के मधुर प्रेम के मनोहर चित्र खींचे हैं, जिसकी अलौकि
शोभा देखते ही बनती है। दोनों ही को अपनी मधुर भाषा औ
कोमल कान्त-पदावली पर अभिमान था। विद्यापति के पद इतने मधु
हैं कि वह इसी लिए मैथिल कोकिल कहे जाते हैं। उपाध्याय
ने इस सुन्दर संग्रह की भूमिका में लिखा है—"केवल
मैथिली भाषा को आपका गर्व नहीं है, वग-भाषा और हिन्दी-भाषा
भाषी भी आपको अपनाने में अपना गौरव समझते हैं। तीन तीन
प्रान्त में समान भाव से समादृत होने का गुण यदि किसी की कविता
में है, तो आप ही की कविता में। संग्रह-कर्त्ता ने उनकी उत्तमोत्तम
रचना-कुसुमावली में से सरस से-सरस सुमन सचय करने में जिस
मधुप वृत्ति का परिचय दिया है, उसकी भूयसी प्रशंसा की जा
सकती है। पाद-टिप्पणियाँ तो सोने में सुगंध हैं।"

पृष्ठ लगभग ४००, नव चित्र, सुन्दर रेशमी जिल्द पर सोने
के अक्षर, रेशमी बुकमार्क और चमकीला आवरण, मूल्य २)

नवयुवक-हृदय-हार

१—प्रेम

लेखक—नवयुवकाचार्य अश्विनी कुमार दत्त

यह अश्विनी बाबू-जैसे मार्मिक लेखक का चमत्कारपूर्ण लेखनी का अद्भुत कौशल प्रकट करनेवाली अनूठी पुस्तक है। इसके एक एक शब्द में वह बिजली है, जो नवयुवकों के जीवन में विलक्षण शक्ति स्फुरित कर सकती है। इसे पढ़कर नवयुवक निश्चय ही भ्रष्ट मार्ग से विमुख होकर सदाचारी और आदर्श प्रेमिक बन सकते हैं, जिस पर मानव-जीवन का सुख-सौभाग्य आश्रित है। पृष्ठ १००, मूल्य ।=), बड़ी सादगी, सफाई और सुन्दरता से छपी है। आरम्भ में अश्विनी बाबू की विस्तृत आदर्श जीवनी दे दी गई है।

२—जयमाल

लेखक—उपन्यास-सम्राट् श्रीशरच्चन्द्र चट्टोपाध्याय

एशिया खण्ड के यशस्वी लेखकों में शरद बाबू का बड़ा ही प्रतिष्ठित स्थान है। यह पुस्तक उन्हीं के 'परिणीता' नामक सरस उपन्यास का सरल अनुवाद है। इसके अनुवादक हैं बिहार प्रादेशिक हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के प्रधान मन्त्री बाबूरामधारीप्रसाद विशारद। इसमें ऐसी विचित्र प्रेम कहानी है कि आप पढ़ कर तसवीर बन जायँगे। मनुष्य के अन्तःकरण के कोमल भावों का ऐसा कारुणिक एवं आकर्षक चित्र अत्यन्त विरल है। कवर पर मूल लेखक का चित्र। शुद्ध सुन्दर स्वच्छ छपाई। मूल्य केवल छ आना। इससे सस्ता संस्करण हिन्दी में नितान्त दुर्लभ है।

३—विपंची

रचयिता—साहित्य भूषण श्रीरामनाथलाल 'सुमन'

इसमें सुमनजी की चुनी चुनाई उत्तमोत्तम कविताओं का संग्रह है। कविताएँ ऐसी मर्मभेदिनी हैं कि पढ़कर आँखें छलछला उठेंगी। छपाई सफाई बिलकुल अनूठी। मूल्य ।)

४—कली

यह बिहार प्रान्त के चार प्रतिभाशाली नवयुवक कवियों की चुनिन्दा कविताओं का संग्रह है। इसमें ऐसी-ऐसी चुभीली रचनाएँ हैं कि पढ़कर आप बरबस कलेजा पकड़ लेंगे। छपाई सफाई दर्शनीय। मूल्य ।)

बाल-मनोरंजन-माला

बगुला भगत

लेखक—प० रामवृक्षशर्मा बेनीपुरी ('बालक'-सम्पादक)

यह पुस्तक बालकों और बालिकाओं के लिये अत्यन्त पवित्र विनोदपूर्ण एव शिक्षाप्रद है। बगुला भगत की कहानी ऐसी रोचक और उपदेशजनक है कि लड़के लड़कियाँ पढ़कर लोट-पोट हो जायँगी और इसका प्रभाव उनके कोमल हृदय पर सदा के लिये अंकित हो जायगा। बगुला भगत की विकट माया और प्रपञ्च-भरी विचित्र लीला पढ़कर हँसी-खेल में ही लड़के लड़कियों की आँखों के सामने इस विलक्षण संसार का सच्चा चित्र घूम जायगा। एक बार लड़के पढ़ लें, तो निश्चय छाती से लगाये फिरें। एक तिरंगा और कई सादे चित्र, सुसज्जित छपाई-सफाइ, मूल्य ।=)

सियार पाँडे

लेखक—पं० रामवृक्षशर्मा वेनीपुरी ('बालक' सम्पादक)

यह पुस्तक तो बालक-बालिकाओं के लिये शुद्ध हँसी और बुद्धिमानी का खजाना ही है। वे पढ़ते-पढ़ते नाच उठेंगे, खाना पीना भूल कर इसी को पढ़ते रहेंगे। इसका कारण यह है कि इसमें केवल उनके मनबहलाव का ही सामान नहीं है, उनके ज्ञान को भी विकसित करनेवाला है—उनके दिल और दिमाग को चुटकियों में हरा-भरा कर देनेवाला अजीब नुस्खा है। इस एक ही जादू की पुड़िया से लड़के लड़कियों का मन चंगा हो जायगा। एक तिरंगा और कई सादे चित्रों से पुस्तक की शोभा ही अनूठी हो गई है। मूल्य ।=)

महिला-मनोरंजन-माला

दुलहिन

लेखिका—श्रीमती चन्द्रमणि देवी

इस पुस्तक में नई बहुओं के लिये अमूल्य उपदेश भरे हुए हैं। जो बहुएँ अपने सगों से बिलग होकर एक ऐसे स्थान में सदा के लिये चली जाती हैं, जहाँ उनका परिचित कोई नहीं और जहाँ जाते ही अपने सगे से-सगे भी बिराने-से हो जाते हैं, उन्हीं अल्हड़ और अनाड़ी बहुओं के लिये यह पुस्तक खास तौर से लिखी गई है, ताकि वे इसे पढ़कर अपना ससुराल वालों के साथ यथोचित प्रेम और आदर का बर्ताव कर अपने परिवार को स्वर्ग और जीवन को सुखमय बना सकें। प्रत्येक कन्या के हाथ में यह शोभा पाने योग्य है। एक एक बात अनुभव से भरी है। भाषा बोलचाल की और बहुत ही

मीठी है। मोटे अक्षरों में लाल-नीली स्याही में बड़ी सुन्दरता से छपी है। मूल्य ।)

सावित्री

लेखिका—स्वर्गीया श्रीमती शिवकुमारी देवी

स्वर्गीया देवीजी विहार के प्रसिद्ध हिन्दी लेखक अखौरी युगल किशोर मुन्सिफ की पुत्री और बिहार-प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के मन्त्री बाबू रामधारी प्रसाद विशारद की अनुजवधू थीं। आप यह एक ही पुस्तक लिखकर अपना नाम अमर कर गई हैं। इसमें प्राचीन भारत की सुप्रसिद्ध सती सावित्री के पातिव्रत की महिमा ऐसी सुन्दर भाषा में लिखी गई है कि एक बार पढ़ने से स्त्रियों की नस-नस में सतीत्व के गौरव की बिजली दौड़ जाती है। मजाल नहीं कि स्त्रियाँ इसे पढ़ने के बाद श्रद्धा के साथ सीस पर न चढ़ा लें। यह भी दो रंगों में खूब सजावट के साथ निहायत नफीस छपी है। मूल्य ।)

अहिल्या

लेखक—प० जटाधरप्रसाद शर्मा "विकल"

यह उस अहिल्या का चरित्र नहीं है, जो पौराणिक काल में अपयश की पिटारी बन चुकी है। यह तो उस वीर रमणी का पुण्य चरित्र है, जो भारत के इतिहास में अहिल्याबाई के नाम से काफी प्रसिद्ध हो चुकी है। इस देवी के चरित्र में यह स्पष्ट झलकता है कि स्त्रियों में कैसी अलौकिक शक्ति और प्रतिभा होती है तथा अपने चरित्र-बल से वे संसार में कितनी कीर्ति और प्रतिष्ठा स्थापित कर सकती हैं। भाषा अत्यंत सरल और सुबोध। छपाई-सफाई देखने ही योग्य। मूल्य ।)

चारु-चरित-माला

(चार आना संस्करण)

सभी जीवनियाँ सचित्र हैं। इनके आवरण-पृष्ठ हिन्दी प्रसार के लिये सर्वथा अनूठे और अपूर्व हैं। देखते ही बनता है।

शिवाजी

हिन्दू-राज्य के संस्थापक छत्रपति शिवाजी की वीर चरितावली पढ़ने के लिए कौन न लालायित होगा। यह जीवनी आधुनिक ऐतिहासिक खोज के आधार पर लिखी गई है। पृष्ठ पृष्ठ से वीरता टपकती है। मुख-पृष्ठ पर शिवाजी की वीर-मूर्ति देखने योग्य है। पृष्ठ संख्या ८०, मूल्य ।)

माइकेल मधुसूदनदत्त

बंग भाषा के सर्वश्रेष्ठ कवि माइकेल मधुसूदन के जीवन की करुण-कहानी। मानव-जीवन की महानता और तुच्छता, उच्चता और नीचता का अपूर्व चित्रण। यथार्थ होने पर भी औपन्यासिक घटना सा चमत्कारपूर्ण। ७० पृष्ठ। सचित्र। मूल्य ।)

विद्यापति

विद्यापति हिन्दी भाषा के जयदेव हैं। इनकी कविता जयदेव की कविता के समान ही सरस है, मधुर है, कोमल है और संगीतपूर्ण है। इसीलिए ये मैथिल-कोकिल कहलाते हैं। इनकी यह प्रामाणिक जीवनी है। पृष्ठ ४८, मूल्य।)

बाबू लंगटसिंह

वर्तमान बिहार के विधाताओं में अन्यतम, नितान्त निर्धन घर में जन्म लेकर अपने उद्योग से लखपती बन जाने वाले, मुजफ्फरपुर के भूमिहार ब्राह्मण कालेज के प्रतिष्ठाता का साहस और उद्योगपूर्ण जीवन-वृत्त। पृष्ठ ५०, मूल्य।)

शेरशाह

भारत के इतिहास का प्रसिद्ध सम्राट्, जो एक साधारण श्रेणी का मनुष्य होने पर भी अपने बाहुबल और कौशल से दिल्ली का बादशाह बन बैठा, तथा जिसने मुगल बादशाह हुमायूँ को हिन्दुस्तान से खदेड़ मारा। पौरुष और बुद्धि के संयोग से अदना आदमी भी कितनी उन्नति कर सकता है, यह देखना हो तो इसे जरूर पढ़िये। मूल्य।)

गुरु गोविन्दसिंह

सिक्ख धर्म के दसवें गुरु की जीवनी, जो एक महान् अद्भुत धनुर्द्धर पुरुषसिंह, सिक्ख जाति का निर्माता, पंजाब का तेजस्वी वीर, भारतवर्ष का एक चमकता हुआ सितारा, स्वतन्त्रता का एकान्त पुजारी, आत्माभिमान का जबरदस्त पुतला था। पढ़कर आप उठेंगे। मूल्य।)